कुरुक्षेत्र

जनवरी 1992

तीन रुपये

ग्रामीण क्षेत्र में स्वास्थ्य सेविका दवाओं का वितरण करते हुए

वर्ष-37, अंक 3 पौष-माघ शक 1913

कुरुक्षेत्र

ग्रामीण विकास मंत्रालय का प्रमुख मासिक

'कुरुक्षेत्र' के लिए मौलिक लेख, कहानी, एकांकी, कविता, संस्मरण, हास्य-व्यंग्य चित्र आदि भेजिए। अस्वीकृत रचनाओं की वापसी के लिए टिकट लगा व पता लिखा लिफाफा साथ आना आवश्यक है।

'कुरुक्षेत्र' की एजेन्सी लेने, ग्राहक बनने, पता बदलने व अंक न मिलने की शिकायत, व्यापार व्यवस्थापक, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नई दिल्ली-110001 से कीजिए।

हमारे अमूल्य मानव संसाधन-इनकी रक्षा कैसे करें ? 2
आशारानी व्होरा

ग्रामीण विकास में वित्तीय संस्थानों की भूमिका 6
डा. कमल पुंजाणी

ग्रामीण स्वास्थ्य-दर्शन में सुधार की आवश्यकता 8
रामजी प्रसाद सिंह

ग्रामीण विकास के लिए विज्ञान और प्रौद्योगिकी 12
राम नारायण शर्मा

ग्रामीण इलाकों में स्वास्थ्य सेवा 16
प्रभात कुमार सिंघल

ग्रामीण विकास और जवाहर रोजगार योजना 20
डा. पारसनाथ सिंह एवं कृष्ण कुमार सिंह

सामाजिक और आर्थिक ढांचे में हिमाचल प्रदेश की विकासोन्मुख पंगवाल जनजाति 24
अमर सिंह रणपतिया

गांधीजी की श्रम के प्रति निष्ठा 26
योगेश चन्द्र शर्मा

खेतों की मांग (एकांकी) 28
विजय कुमार शर्मा

ग्रामीण स्वास्थ्य एक चुनौती 31
विजय शंकर

ग्रामीण स्वास्थ्य सेवा में अग्रणी राजस्थान 34
बलवन्त सिंह हाड़ा

परिवार कल्याण एवं ग्रामीण विकास 38
गणेश कुमार पाठक

ग्रामीण क्षेत्रों में स्वास्थ्य की समस्या समाधान असंभव नहीं 41
धर्मेन्द्र त्यागी

बांदा जनपद के विकास में तुलसी ग्रामीण बैंक की भूमिका 45
डा. कृष्ण कुमार मिश्र

ग्रामीण वित्त में क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों का योगदान 50
सूरज सिंह

प्रकाशित लेखों में अभिव्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं तथा यह आवश्यक नहीं कि सरकारी दृष्टिकोण भी यही हो।

सम्पादकीय पत्र व्यवहार : सम्पादक, कुरुक्षेत्र (हिन्दी), ग्रामीण विकास मंत्रालय, 467, कृषि भवन, नई दिल्ली के पते पर करें। दूरभाष : 384888

हमारे अमूल्य मानव संसाधन – इनकी रक्षा कैसे करें ?

आशारानी व्होरा

भारत के एक प्रसिद्ध कवि की प्रसिद्ध पंक्ति- 'अहा! ग्राम्य जीवन भी क्या है !' सचमुच कुछ ही दशक पहले हमारे गांवों में घी, दूध की नदियां बहती थीं । यह अलग बात है कि बदली स्थितियों में भी वहां बड़ी-बूढ़ियां बहुओं को आर्शीवाद देते समय आज भी यह कहने से न चूकती हों कि 'दूधो नहाओ, पूतो फलो', जबकि अब न तो वहां 'दूधो नहाओं' की बात है, 'न पूतो फलो' का कोई वरदान रह गया है ।

ग्राम्य-जीवन का आनंद बिना प्रदूषण के ताजी शुद्ध हवा, प्राकृतिक सौंदर्य, खेतों की हरियाली, ताजे फल, सब्जियां आदि के साथ, थोड़ी फुरसत की, चैन की सांस से भी जुड़ा रहा है और सरल हृदय भोलीभाली इन्सानियत से भी ।

अब शहरी औद्योगिक सभ्यता के, उपभोक्ता समाज के, सिनेमायी और वीडियो संस्कृति के प्रभावों से तथा महंगाई और जनसंख्या के दबावों से यह आनंद ग्रामीण जीवन से भी बहुत हदतक छिनता जा रहा है । उस पर रोजी-रोटी की तलाश में नगरों-महानगरों की ओर दौड़ ने एक ओर वहां भी पारिवारिक विघटन की प्रक्रिया शुरु कर दी है, दूसरी ओर राजनीति के प्रदूषण और सामाजिक भ्रष्टाचार ने ग्रामीण जीवन की शांति भंग कर दी है । इससे ग्रामीणों का नैतिक बल भी गिरा है, उनकी असुरक्षा भी बढ़ी है । महंगााई के भारी दबाव और छोटे परिवार की समझदारी में वृद्धि के बावजूद, यह असुरक्षा-भावना अंततः जनसंख्या नियंत्रण में कहीं न कहीं बाधक बन जाती है । जैसे इतने प्रचार, इतनी सामाजिक जागरुकता के बावजूद, परिवारों में लड़के के जन्म पर खुशी का इजहार और लड़की के जन्म पर भाग्य को कोसना आज भी आम बात और जब तक सामाजिक स्थितियां लड़कियों-महिलाओं की सुरक्षा और वृद्धावस्था की आर्थिक सुरक्षा के लिए अनुकूल नहीं बनाई जातीं, लड़के-लड़की का यह अन्तर आम बात ही बनी रहेगा । इसी तरह अन्य मसले भी हैं, जिनमें से ग्रामीण स्वास्थ्य और रोजगार तथा महिला व बाल-कल्याण कार्यक्रमों का सफल क्रियान्वयन अहम मसले हैं । यहां हम इन पर क्रमशः संक्षेप में विचार करेंगे ।

संस्कृतिमय लोक-जीवन

भारतीय लोक-जीवन संस्कृतिमय कहा जाता है यानी जिसमें लोकरंजन और लोकमंगल के साथ, संस्कारशीलता और उत्सवधर्मिता जुड़ी है । हमारे मनीषियों ने गर्भाधान से महाप्रस्थान तक जीवन को सोलह संस्कारों में दीक्षित कर, इन संस्कारों को मांगलिक उत्सवों का रूप दिया, तो इसके पीछे उनकी गहरी सूझबूझ थी कि धरती से जुड़े, प्रकृति के बीच या निकट बसे कठोर श्रम-संघर्षमय जीवन को सरल सरस बनाया जा सके । दूसरे शब्दों में जीवन को जीने योग्य बनाया जा सके ।

वैज्ञानिक, औद्योगिक, तकनीकी प्रगति से पूर्व यह जीवन-संघर्ष बहुत कठिन था । प्रकृति के सीधे संपर्क में हर मौसम की, हर प्राकृतिक विपदा की मार सीधे झेलनी होती थी । यंत्रों के आविष्कार से पूर्व हर काम हाथ के श्रम पर निर्भर था । छोटे-छोटे राज्यों में ही सीमा-युद्ध नहीं होते थे, गांव और कबीले भी आपस में लड़ते रहते थे, जिनमें अक्सर युवा पुरुष ही मारे जाते थे । इसलिए परिवार में पुरुष-शिशु का आगमन शुभमाना गया । प्राकृतिक विपदाओं– बाढ़, तूफान, अकाल, महामारी आदि में और स्वास्थ्य-सुविधाओं की कमी में अधिक जानें चली जाती थीं, तो अधिक बच्चों का जन्म भी आम तौर पर सहज स्वीकार्य था । जनसंख्या कम होने पर खाने पीने की चीजों की कमी न थी और आधुनिक जीवन जैसे रहन सहन के अन्य खर्चे न के बरारबर थे । लोग 'सादा जीवन उच्च विचार' में आस्था रखते थे ।

जाहिर है, बाधाएं कम थीं, आर्थिक और मानसिक दबाव कम थे, सामाजिक और पारिवारिक सुरक्षा ज्यादा, तो केवल प्राकृतिक व दैवी विपदाएं गीतों, कथाओं, अर्चनाओं, प्रार्थनाओं और लोकरंजन की गतिविधियों, लोकमंगल की कामनाओं के सहारे झेल ली जाती थीं । इसी उत्सवधर्मिता के कारण जीवन रसमय बना रहता था । उसमें कुंठा-निराशा, चरित्रहीनता का कम स्थान था । सुख को भगवान का वरदान और दुख को भाग्य की विडंबना या कर्मों का फल मान लिया जाता था । यहां तक कि अभाव भी तब संताप की, मानसिक क्लेश की बात नहीं थी । बस था तो संतोष या पुरुषार्थ ।

क्या अब भी ऐसा कहा जा सकता है ?

इसमें संदेह नहीं कि आज भी हमारा लोक-जीवन लोक-रंजन और लोक-मंगल की भावना से रिक्त नहीं है । उसमें भरपूर रंगीनी है । पर यह आकर्षण हम शहरियों के लिए या बाहर के सैलानियों-विदेशियों के लिए ही अधिक है । स्वयं

ग्रामीण जन अब बढ़ती जनसंख्या की, महंगाई की, बीमारियों की, असुरक्षा की स्थितियों से इतने घिर गए हैं कि उनके लिए अब उत्सव-त्यौहार, मांगलिक अवसर आपचारिकता अधिक हैं, मानसिक संतोष व आनंद के साधन कम । दिखावा अधिक है, सामाजिक जुड़ाव द्वारा मिल-बांट के अवसर कम । आपाधापी, भ्रष्टाचार, असुरक्षा और मानसिक अशांति ग्रामीण जीवन के हिस्से शायद शहरी जीवन से भी अधिक आ गई है और सामाजिक अन्याय-असुरक्षा की स्थितियों ने राजनीतिक भ्रष्टाचार, रिश्वतखोरी, हिंसा-अपराध तक को अनिवार्य बुराइयों के रूप में स्वीकार कर लिया है । जाहिर है कि अपने स्वभाव के विपरीत जाकर, अपनी सीमाओं के बाहर जाकर हम कुछ स्वीकार करते हैं तो मानसिक ऊहापोह से आगे बढ़ कर मानसिक समस्याओं और मनोरोगों को भी राह मिलती है । इससे भी फिर शारीरिक और सामाजिक शक्तियों का ह्रास होता है । स्वास्थ्य के प्रति जागरुकता और चिकित्सा-सुविधाओं की कमी से तो श्रम-शक्ति घटती ही है, इन कारणों से वह और घट जाती है ।

मानव-संसाधन : राष्ट्र की अमूल्य संपदा

मानव-संसाधन विकास का मतलब समन्वित विकास है । चूंकि राष्ट्र का विकास भौतिक साधनों की अपेक्षा इस विकास पर अधिक निर्भर करता है, हमें इस ओर अधिक ध्यान देना है । हमारे राष्ट्रीय समग्र मानवीय संसाधन का 80 प्रतिशत भाग अभी भी ग्रामीण क्षेत्र में है । इसलिए प्राथमिकता-क्रम में भी यही भाग आता है, जबकि अभी तक व्यवहार में प्राथमिकता मिलती रही है, शहरी 20 प्रतिशत भाग को, जहां शिक्षा-रोजगार के साधन ही अधिक नहीं, अधिक जागरुकता के कारण स्व-अर्जित साधन भी अधिक हैं । गांवों से शहरों की ओर दौड़ को रोकने के लिए, शहरी भीड़भाड़ में गंदी बस्तियों में रहने की मजबूरियों के साथ, वहां से बीमारियों, यौन बीमारियों व बुराईयों को शहर से गांव लाकर फैलाने की प्रवृत्तियों को भी रोकने के लिए प्राथमिकता का यह क्रम अब बदलना ही होगा । क्या हैं, ये प्राथमिकताएं ?

स्वास्थ्य-सुविधाएं, रोजगार-साधन और स्व-रोजगार की प्रेरणा

चीन के बाद भारत संसार का सबसे बड़ा देश है, जहाँ बच्चों की संख्या ही तीस करोड़ से अधिक है । सरकारी आंकड़ों के अनुसार भी, वर्तमान भारत में एक करोड़ सत्तर लाख बच्चे बाल श्रमिक के रूप में अपनी रोजी-रोटी कमाने के लिए मजबूर हैं । बच्चों के लिए अनिवार्य शिक्षा-नीति लागू की जाए तो भी यह तत्काल प्रभावी नहीं हो सकती, क्योंकि इनके लिए विकल्प सामने नहीं है । यहां तक कि अस्वास्थ्यकर स्थितियों में काम करने वाले बच्चों के लिए बनाए गए निषेध-कानून और कल्याण-कानून भी व्यवहार में अधिक प्रभावी सिद्ध नहीं हुए । राष्ट्रीय पोषण संस्थान द्वारा कराए गए सर्वेक्षण के अनुसार, ज्यादातर बच्चे ऐसे कामों में लगे हैं, जो उनके स्वास्थ्य और विकास के लिए हानिकारक हैं और पांच साल से कम उम्र के बच्चों की हालत भी, सही खुराक, दवा-दारु के अभाव में कुछ अच्छी नहीं है । अध्ययन के अनुसार, केवल दस प्रतिशत बच्चों को ही सही पोषण मिल पाता है । सौ में से नब्बे बच्चे किसी न किसी स्तर पर कुपोषण के शिकार पाए गए । जैसे सौ में से छत्तीस कम पोषित थे, चवालीस सामान्य रूप से कुपोषित थे, तो नौ गंभीर रूप से । अधिकतर बच्चों में कोई न कोई स्वास्थ्य-गड़बड़ी थी । दांतों-मसूड़ों की बीमारियां आम तौर पर पाई गईं । छूत वाले संक्रामक रोग, चर्म रोग, पेट और कीड़े और अतिसार आदि पेट के अन्य रोग भी कम न थे । पोलियो जैसी गंभीर बीमारी के आंकड़े भी शोचनीय स्तर के थे । इन रोगों के मुख्य कारण थे, अपर्याप्त और असंतुलित आहार, जिसमें मुख्य है विटामिनों की कमी और सफाई-स्वच्छता का अभाव । इन सब कारणों से जब सौ में से बयालीस बच्चे अपनी चौथी वर्षगांठ नहीं मना पाते, तो बचे बच्चों के बड़े होने पर भी उनके सामान्य स्वास्थ्य-स्तर और कार्यक्षमता का अनुमान लगाया ही जा सकता है । सरकारी स्तर पर चलाई जा रही 'एकीकृत बाल विकास योजना' दुनिया की सबसे बड़ी योजना होकर भी, भारत के संदर्भ में अपर्याप्त है, दूसरे उसी आकार में उससे जुड़ी अनियमितताएं उसे और भी अपर्याप्त बना देती हैं कि समर्पित कार्यकर्ताओं का अभाव है ।

ये बच्चे ही बड़े होकर देश की बागडोर संभालने वाले हैं, तो इस ओर ही सबसे पहले ध्यान देने की आवश्यकता है, अन्यथा अपर्याप्त साधनों से अपेक्षित लाभ की भी आशा नहीं लगाई जा सकती । बाल-मृत्यु दर में पहले से कमी के बावजूद, हमारे यहाँ स्थिति अभी भी शोचनीय है और यह भी एक कारण है, जन्म-दर में कमी न ला पाने का । बच्चा बचेगा कि नहीं ? यह चिन्ता और असुरक्षा की भावना आगामी बच्चे का आगमन रोकने में हिचकिचाती है । परिणाम होता है, कमजोर व अस्वस्थ अधिक संतानें । फिर जनसंख्या-दबाव से महंगाई का और दबाव, अपोषण और कुपोषण की और मार, साधनों की व स्वास्थ्य-सुविधाओं की और कमी ।

जहां तक स्वास्थ्य-सेवाओं के विस्तार की बात है, वह काम सरकार का है । लेकिन अन्य सुधारात्मक उपायों के लिए केवल सरकारी योजनाओं पर निर्भरता से काम नहीं चलेगा । भारत जैसे विशाल देश में, जहां जनसंख्या के अनुपात में भौतिक संसाधान की कमी है और मानवीय संसाधनों में निरन्तर गुणात्मक ह्रास हो रहा है, यह बहुत जरुरी है कि जन समुदाय में अपनी समस्याओं का समाधान खोजने की स्व-चेतना जाग्रत की जाए । सरकारी, गैरसरकारी, स्थानीय संस्थाओं की कार्यकर्त्ता मंडली यहां अपनी अहम् भूमिका निभा सकती है क्योंकि कारण केवल गरीबी ही नहीं, खानपान संबंधी गलत आदतें, रूढ़ धारणाएं और सुलभ चिकित्सा-सुविधाओं या रोग-प्रतिरक्षक टीकों के प्रति अंधविश्वासजन्य भय भी इसके पीछे हैं । यह गलत धारणा तो बहुत जबरदस्त रूप में प्रचलित है कि पोषक भोजन तो अमीरों के वश की बात है । अशिक्षा और अज्ञानता ही इस धारणा की जनक है, अन्यथा जानकारी हो तो स्थानीय उपलब्ध सस्ती खाद्य सामग्री से भी पर्याप्त पोषण मिल जाता है । सरकारी और गैर सरकारी एजेंसियों व संस्थाओं द्वारा कमजोर वर्गों और पहली जरुरत वाले तीन वर्गों– गर्भवती स्त्रियों, स्तनपान कराने वाली माताओं और बच्चों– के लिए पोषक आहार संबंधी जरूरी जानकारी देने तथा जरुरतमंद वर्गों में पोषाहार वितरित करने की जो निशुल्क व्यवस्था की गई है, अनभिज्ञता के कारण ये वर्ग उसका लाभ भी नहीं ले पाते । इसी तरह, प्राथमिक स्वास्थ्य-केन्द्रों तक में बच्चों को रोग-प्रतिरक्षण के लिए जरुरी टीके लगाने की जो व्यवस्था है, उसका लाभ भी बहुत कम संख्या में लिया जा रहा है, आकाशवाणी और दूरदर्शन द्वारा यह उपयोगी जानकारी निरन्तर प्रसारित करने के बावजूद । इसका कारण अज्ञानता और अंधविश्वास ही तो है ।

बाल मानसिक चिकित्सक श्रीमती वीना रानी निगम के अनुसार, "बच्चों में मानसिक बाध्यता का कारण भी अधिकतर गर्भवती मां और शिशु के भोजन में पोषक तत्वों की कमी ही है ।" इसके अलावा, घर पर प्रसव यदि सामान्य है तो ठीक, अन्यथा कठिन प्रसव में समय पर जरूरी सहायता न मिल पाने से कई बार जन्म के समय ही शिशु को पर्याप्त आक्सीजन न मिलने से उसका मस्तिष्क विकृत हो जाने का खतरा रहता है । इसलिए ही तो शिशु को तुरंत रुला कर देखा जाता है । जो बच्चा उस समय नहीं रोता, उसके मस्तिष्क को बचाने के लिए तुरंत कुछ किए जाने की जरुरत होती है, जो अनपढ़ व अकुशल दाइयां प्रायः नहीं समझतीं और बच्चा जीवन भर के लिए मानसिक कमी या बाध्यता का शिकार हो जाता है । यों भी प्रथम चार वर्षों में ही बालक के मस्तिष्क का 75-80 प्रतिशत विकास हो जाता है । यदि इस दौरान उसे पर्याप्त पोषक आहार नहीं मिलता तो उसका दिमाग कमजोर रह जाता है । शिक्षा का अभाव व्यक्ति की कार्यकुशलता पर इतना प्रभाव नहीं डालता, जितना यह कारण । इसलिए कुल मिलाकर समस्या दूनी-चौगुनी हो जाती है । समन्वित विकास का अर्थ इन सभी दिशाओं में समन्वित सोच भी है । इस सोच को भी विकसित किया जाना चाहिए । पारिवारिक, सामाजिक, संस्थागत, चिकित्सकीय और सरकारी योजनाओं के अन्तर्गत, इन चारों स्तरों पर यह सोच जरुरी है, अन्यथा भारत बौद्धिक दृष्टि से भी पिछड़ जाएगा, क्योंकि हमारे बहुसंख्यक बच्चे गांवों से ही आते हैं ।

ग्रामीण बाल-केन्द्रों में आंगनवाड़ी-सेविकाओं की संख्या एक से दो करके तमिलनाडु सरकार ने इस प्रयोग में अच्छी सफलता पाई है । यह व्यवस्था अन्यत्र भी अपनाई जानी चाहिए, क्योंकि एक सेविका मुश्किल से अपने केन्द्र का काम ही संभाल पाती हैं । उसके पास इतना समय ही नहीं होता कि वह गांव की गर्भवती स्त्रियों, दूध पिलाने वाली माताओं और बच्चों के कल्याण के लिए अतिरिक्त कार्य कर सके । यदि दो कार्यकर्त्ता होंगी तो स्थानीय महिलाओं की भागीदारी भी इन कल्याण-कार्यक्रमों में बढ़ाई जा सकती है और परिवार-कल्याण तो फिर महिलाएं स्वयं ही चलाएं तो सफलता ज्यादा हाथ लगती है ।

इसी संदर्भ में एक अन्य सुझाव भी हो सकता है कि परिवार-कल्याण और बाल-कल्याण कार्यक्रमों को एक साथ जोड़कर इन्हें अधिक प्रभावी बनाया जाए । परिवार नियोजन कार्यक्रम को संख्यात्मक दृष्टि से ही न देख कर गुणात्मक दृष्टि से भी देखा जाए कि जनसंख्या कमी करने के प्रयत्न में कमी का लक्ष्य भी न पूरा हो और गलत आयोजन से हम जनसंख्या का गुणात्मक ह्रास भी कर लें । ये अवांछित परिणाम सामने आ भी चुके हैं । प्रचार का लक्ष्य बहुसंख्य निम्न वर्ग व निम्न पोषित वर्ग न होकर हमारे अनजाने में खाता पीता समृद्ध व शिक्षित वर्ग हो गया है । इस पहल से चेतन वर्ग को और चेतन करके हमने प्रतिभावान व सुशिक्षित व्यक्तियों की संख्या और घटा ली है और अशिक्षित तथा अ-संस्कारी (जिनमें नव धनाढ्य भी शामिल हैं) लोगों की संख्या में अपेक्षित कमी लाने में असफल रहे हैं । राष्ट्र की प्रतिभा, संस्कारशीलता, चरित्रनिष्ठा और कार्यकुशलता में ह्रास के रूप में दुष्परिणाम सामने हैं । निश्चय ही इसके औद्योगिक प्रगति, उपभोक्ता समाज के प्रभाव और बाहरी संसार के जीवन-मूल्यों के आक्रमण आदि अन्य

कारण भी हैं । पर हमें अपने जनसंख्या नियोजन की इस कमी या भूल को भी समझना और सुधारना है, लक्ष्यबेध की दिशाएं बदल कर, आगे चल कर हमें इसके और अधिक दुष्परिणाम न झेलने पड़ें । पोषण, स्वास्थ्य-सुविधाओं, शिक्षण-प्रशिक्षण की सुविधाओं पर सब का समान हक मानते हुए भी । मानना ही काफी नहीं होता, उसका कितना सफल क्रियान्वयन हम कर पाते हैं, अच्छे परिणाम इसी पर निर्भर करते हैं ।

इस समस्या का एक दूसरा पहलू यह भी है कि एक ओर आर्थिक दृष्टि से पिछड़े परिवारों की संख्या ज्यादा है, दूसरी और हमारे उत्पादन का सही वितरण नहीं हो पाता । सही वितरण का दायित्व राष्ट्र पर है कि वह अपनी आर्थिक नीतियों को जनोन्मुख करके पिछड़े परिवारों की क्रय-शक्ति बढ़ाए, बेतहाशा बढ़ती महंगाई की लगाम थामे और जो उपलब्ध हो सकता है, उसे तो जरूरतमंद लोगों तक पहुंचाए । सस्ते राशन की दुकानों का माल क्यों ब्लैक में बिक जाता है ? और घंटों-दिनों अपने काम-धंधे का नुकसान करके लाइन में लगे लोगों को समय पर व पूरा मिल नहीं पाता; कभी कभी तो महीनों मिल ही नहीं पाता ? इन स्थितियों की जांच कर इन पर कड़ाई से काबू पाया जाए कि सही वितरण का यह लक्ष्य प्राप्त किया जा सके । ..... पर जो मिलता है, जो उनके क्रय-शक्ति के भीतर खरीदा जा सकता है, उसके सही उपयोग का दायित्व स्वयं जनता पर है, जिसे कम खर्च में पोषक भोजन जुटाने, सफाई-स्वच्छता, रोग-प्रतिरक्षक टीके लगवाने और उपलब्ध चिकित्सा-सुविधाओं का लाभ उठाने के लिए प्रशिक्षित किया जाना चाहिए । प्रशिक्षण-विधियों में स्थानीय रीति-रिवाजों, लोक-मान्यताओं, लोक विश्वासों, भोजन सम्बन्धी आदतों का तालमेल बैठा कर उन्हें प्रभावित होने वाले जन समुदाय के लिए ग्रह्य बनाना भी उतना ही जरूरी है जितना कि प्रशिक्षण की व्यवस्था करना । इस सम्बन्ध में महाराष्ट्र के गांवों में किया गया एक प्रयोग भी अनुकरणीय होगा कि गांव की बड़ी-बूढ़ियों को पहले प्रशिक्षित करके, उनके माध्यम से अगली दो पीढ़ियों तक उपयोगी संदेश पहुंचाना क्योंकि गांवों में कोई भी परिवर्तन बड़ों के सहयोग व आर्शीवाद के बिना प्रभावी या सफल नहीं हो पाता, इस आयोजन के दो लाभ होंगे, एक श्रम की आदी बड़ी-बूढ़ी स्त्रियों के हाथ में काम देकर उन्हें स्व-निर्भर बनाना कि वे संतान की, बहुओं की उपेक्षा की शिकार न हों, दूसरे नई योजनाओं का क्रियान्वयन व नेतृत्व उनके हाथ में देकर, परिवर्तनकामी नई पीढ़ी के मार्ग में आने वाली मुख्य बाधा को दूर कर, उपयोगी परिवर्तनों का सफल क्रियान्वयन सुलभ बनाना । परिवार-नियोजन और परिवार कल्याण के अन्य कार्यक्रमों के अपेक्षित परिणाम पाने के लिए इस सुझाव पर भी ध्यान देकर देखें ।

अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा और रोजगार के, स्व-रोजगार के अधिक साधन तथा सामाजिक सुरक्षा-योजनाएं, ये तीन कार्यक्रम भी समन्वित ढंग से चलाएं तो जनसंख्या वृद्धि पर, बिना विशेष प्रयत्न के भी, स्वयं रोक लगेगी और स्वास्थ्य-सुधार की, पोषण की, सामाजिक चेतना-जागरण की, राष्ट्रीय कार्यकुशलता बढ़ाने की योजनाएं अधिक सफलता से क्रियान्वित की जा सकेंगी । साथ ही जनसंख्या में जिस गुणात्मक ह्रास की ऊपर चिंता जाहिर की गई है, उसे (अब देर हो जाने पर भी) किसी हद तक रोका जा सकेगा । अक्सर शहरी मध्य वर्ग के लोग अपने बच्चों की शिक्षा-दीक्षा पर अपनी हैसियत से बाहर जाकर भी खर्च करते हैं कि उनका कैरियर व भविष्य बने । इसके दो अप्रत्यक्ष परिणाम स्वयं ही सामने आते हैं, अधिक बच्चों पर रोक और लड़के-लड़कियों की देर से शादी । इसके विपरीत गांव के किसान, मजदूर, छोटे दुकानदार, कस्बों और छोटे शहरों तक के व्यवसायी 'अधिक कमाने वाले हाथ' के नाम पर परिवार-नियोजन कार्यक्रमों के प्रति कोई अनुकूल प्रतिक्रिया व्यक्त नहीं करते । गरीबी, बीमारी, अकुशल श्रम आदि बुराईयों और बेरोजगारी के बावजूद, उनका दृष्टिकोण परिवार कल्याण कार्यक्रमों में बाधा उत्पन्न करता है ।

इसका हल है, कम से कम प्राथमिक अनिवार्य शिक्षा कि मां बाप पर तब तक तो बच्चे का खर्च उठाने का दायित्व पड़े, जिससे अगली संताने जल्दी लाने के प्रति वे निरुत्साहित हों, उन्हें 'कमाने वाले हाथ' बहुत छोटी उम्र से उपलब्ध न हों, बाल-श्रम पर स्वचालित तरीके से रोक लगे, बाल स्वास्थ्य व राष्ट्र की कार्यकुशलता का विकास हो और जनसंख्या के गुणात्मक ह्रास को भी रोका जा सके । परिवार नियंत्रण, परिवार-कल्याण और रोजगार, स्व-रोजगार को प्रोत्साहन की दृष्टि से ऐसे स्वचालित उपायों से अधिक लाभ की संभावना हो सकती है, बजाय सीधे हस्तक्षेप और प्रचार के । अब रोजगार की सरकारी, गैरसरकारी योजनाओं के साथ स्व-रोजगार के साधन कैसे बढ़ाए जाएं ? लोगों को आवश्यक सुविधाएं व उनकी जानकारी देकर कैसे इस ओर उन्मुख किया जाए ? यह स्थानीय साधनों-सेवाओं और नियोजकों के तालमेल पर निर्भर करेगा । सही नियोजन और भ्रष्टाचार की रोकथाम हो सके तो सफलता असंदिग्ध होगी । स्थानीय स्तरों पर तकनीकी विकास और ग्रामीणोपयोगी तकनीकों का उपयोग भी इस दिशा में उठाया जाने वाला एक उपयोगी कदम हो सकता है । केवल 'ऋण-सुविधाओं' और 'सबसीडी' के सहारे चल कर तो बहुत देख लिया । अब जरुरत है, कुछ नए परिवर्तनकारी कदम उठाने की ।

जी- 302/सैक्टर 22,
नोएडा-201301

ग्रामीण विकास में वित्तीय संस्थानों की भूमिका

डॉ० कमल पुंजाणी

भारत के 75 प्रतिशत लोग गांवों में बसते हैं। गांवों में बसने वाले 90 प्रतिशत लोग कृषि पर निर्भर रहते हैं। यही कारण है कि भारत की अर्थ-व्यवस्था को 'कृषि प्रधान अर्थ-व्यवस्था' कहा जाता है। कृषक हमारे देश का 'भाग्य विधाता' है। हिन्दी के प्रसिद्ध निबन्धकार सरदार पूर्णसिंह ने अपने निबन्ध 'मजदूरी और प्रेम' में कृषक की महत्ता प्रदर्शित करते हुए लिखा है :

"हल चलाने वाले अपने शरीर का हवन किया करते हैं। खेत उनकी हवनशाला है। उनके हवनकुण्ड की ज्वाला की किरणें चावल के लम्बे और सफेद दानों के रूप में निकलती हैं। गेहूं के लाल-लाल दाने इस अग्नि की चिनगारियां सी हैं।.."

किसान के इस महत्व और गौरव को ध्यान में रखते हुए भारत सरकार ने पंचायती राज तथा पंचवर्षीय योजनाओं के द्वारा कृषक कल्याण एवं ग्रामीण विकास की दिशा में जो प्रयास किया है, उसका किंचित् अनुमान हम विभिन्न वित्तीय संस्थानों की उपलब्धियों से लगा सकते हैं ?

कृषि एक व्यवसाय है और प्रत्येक व्यवसाय में पूंजी-निवेश की आवश्यकता होती है। परम्परागत कृषि में पूंजी की अपेक्षा जन-शक्ति को विशेष महत्व दिया जाता था, किन्तु आज का किसान कृषि की नयी पद्धतियों से परिचित होने लगा है। वह उत्तम प्रकार के बीज तथा रासायनिक उर्वरक से अच्छी फसल पाने का प्रयास करता है।

सरकारी योजनाओं तथा किसानों के प्रयासों को विफल करने में कभी-कभी मानवीय और प्राकृतिक शक्तियां विशेष सक्रिय दीख पड़ती हैं। जैसे, कभी अच्छे उर्वरक के अभाव में कुछ एजेन्ट अथवा अधिकारी प्राइवेट कम्पनियों से उर्वरक खरीदकर किसानों के साथ धोखाधड़ी करते हैं। किसानों के इस शोषण में लाल फीताशाही का हिस्सा भी कम नहीं होता।

भारत के किसानों को विविध प्रकार के शोषकों से मुक्त कराने के लिए वित्तीय संस्थान बड़ी महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं।

उर्वरक क्षेत्र में परिव्याप्त उपर्युक्त शोषण नीति से किसानों को सुरक्षा प्रदान करने के लिए 'कृभको' (कृषक भारती को-आपरेटिव लि०) अथवा इफको (इण्डियन फर्टिलायजर को-आपरेटिव लि०) की स्थापना की गयी है।

'कृभको' सहकारी प्रवृत्ति के क्षितिज का देदीप्यमान नक्षत्र है जिसका मुख्य उद्देश्य समय-समय पर किसानों को उत्तम तथा यथेष्ट उर्वरक प्रदान करना है।

मानवीय अवरोधों के अतिरिक्त किसानों को कभी-कभी अनावृष्टि अतिवृष्टि जैसी प्रकृतिक आपत्तियों का भी सामना करना पड़ता है।

भारतीय किसानों को प्रतिवर्ष उत्कंठित नेत्रों से वर्षा की प्रतीक्षा करनी पड़ती है। किसानों की इस प्रकार की विवश स्थिति को अनुलक्षित करते हुए हमारे देश के आयोजन मंच ने भारतीय कृषि को 'वर्षाऋतु का जुआ' कहा है।

इस प्रकार की प्रकृतिक विपदाओं में भी वित्तीय संस्थान किसानों की भरपूर सहायता कर सकते हैं। ग्रामीण विकास में सक्रिय वित्तीय संस्थानों में निम्नलिखित संस्थान विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं :-

(1) रिजर्व बैंक
(2) राष्ट्रीयकृत तथा व्यापारी बैंक
(3) ग्रामीण बैंक
(4) नाबार्ड बैंक

ये वित्तीय संस्थान किसानों को आवश्यकतानुसार, निश्चित ब्याज से ऋण देते हैं और विशेष परिस्थितियों में ब्याज तथा ऋण अदायगी में छूट भी देते हैं। समयावधि की दृष्टि से किसान उपर्युक्त संस्थानों से तीन प्रकार के ऋण लेते हैं :-

(क) संक्षिप्त अवधि का ऋण
(ख) मध्यम अवधि का ऋण
(ग) दीर्घ अवधि का ऋण

संक्षिप्त अवधि का ऋण फसल की बुवाई, कटाई आदि के लिए लिया जाता है। इस ऋण की अवधि सामान्यतया एक या डेढ़ वर्ष की होती है।

मध्यम अवधि का ऋण कृषि-विषयक साधनों को खरीदने,

कुंए खुदवाने जमीन जोतने आदि के लिए लिया जाता है। इसकी अवधि प्रायः दो से पांच वर्ष तक की होती है।

दीर्घ अवधि का ऋण जमीन, गोदाम आदि खरीदने के लिए लिया जाता है और इसका भुगतान 20 या 25 वर्षों में किया जा सकता है।

रिजर्व बैंक आर्थिक नीति-निर्धारण में अत्यन्त महवपूर्ण की भूमिका निभाता है। यह परोक्ष रूप से विभिन्न बैंको द्वारा ग्रामीण विकास में सहायक भी होता है। सन् 1970 में 'लिंक बैंक' (Link Bank) अथवा 'लीड बैंक' (Lead Bank) की योजना का आरम्भ कर रिजर्व बैंक ने ग्रामीण विकास में उल्लेखनीय कार्य किया था। इस योजना के अन्तर्गत जिले के जिस बैंक का कार्य सराहनीय होता है और उसकी शाखाओं का नेटवर्क संतोषप्रद होता है तो उस बैंक को 'लीड बैंक' का उत्तरदायित्व सौंपा जाता है। उत्तर गुजरात तथा कच्छ में 'देना बैंक' तथा सौराष्ट्र में 'स्टेट बैंक ऑफ सौराष्ट्र' लीड बैंक का कार्यभार वहन करते हैं।

कृषि एवं ग्रामीण विकास के लिए वित्तीय सहायता प्रदान करने में राष्ट्रीयकृत तथा व्यापारी बैंक का योगदान भी अपना पृथक स्थान रखता है। 1989-90 के वर्ष में इन बैंकों द्वारा कृषि के लिए 2450 करोड़ रुपये की वित्तीय सहायता निर्धारित की गई थी।

कृषि-विकास में ग्रामीण बैंकों की भूमिका भी विचारणीय है। ये बैंक गांवों, छोटे और सीमान्त किसानों को वित्तीय सहायता प्रदान करने में विशेष सक्रिय रहे हैं। 1989-90 के वर्ष में कृषि विकास के लिए इन बैंकों ने 700 करोड़ रुपये की राशि खर्च की थी।

नाबार्ड भी ग्रामीण विकास में एक स्मरणीय भूमिका निभाता है। इसकी स्थापना 12 जुलाई 1982 में शिवरामन समिति की सिफारिश के आधार पर की गयी थी। यह प्रत्यक्षतः किसानों को वित्तीय सहायता प्रदान नहीं करता अपितु सहकारी बैंक, ग्रामीण बैंक आदि के जरिये आर्थिक लाभ पहुंचाता है।

ये सभी वित्तीय संस्थान केवल किसानों को ही आर्थिक सहायता नहीं देते बल्कि संकलित ग्राम विकास की सभी प्रवृत्तियों जैसे-राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार, इंदिरा आवास योजना, महिला विकास, ग्रामीण हरिजन-विकास, उर्जा-विकास इत्यादि को भी वित्तीय सहायता प्रदान करते हैं।

इस प्रकार हम देख सकते हैं कि ग्रामीण विकास में वित्तीय संस्थान अत्यधिक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। यदि इनके मार्ग में आने वाले अवरोधों को हटा दिया जाये, लालफीताशाही पर अंकुश लगाया जाये तो इन संस्थानों की उपलब्धियों का प्रकाश विशेष रूप से विस्तृत होगा और ग्रामीण विकास की योजनाएं सही अर्थ में प्रतिफलित होंगी।

प्रीतदीप- 1, सिद्धार्थ टेनामेंट्स
सत्य सांई स्कूल के निकट
जामनगर- 361 008 (गुजरात)

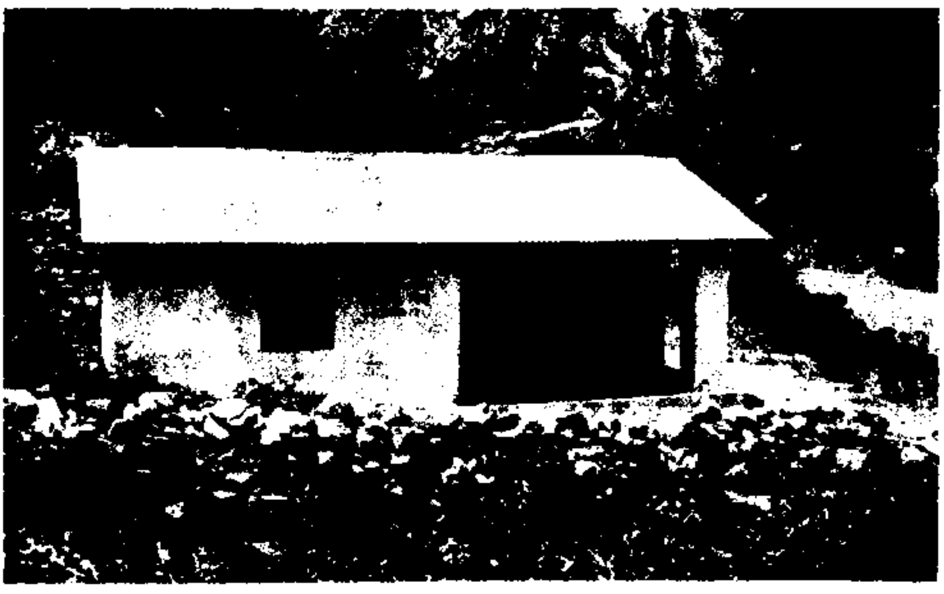

ग्रामीण स्वास्थ्य-दर्शन में सुधार की आवश्यकता

रामजी प्रसाद सिंह

भारत गांवों का देश है। यहां की तीन चौथाई आबादी घोर देहातों मे रहती है। अतएव सन् 2000 तक सभी नागरिकों के दरवाजे तक स्वास्थ्य-सेवा पहुँचाने का लक्ष्य प्राप्त करना एक दुष्कर कार्य है। यह लक्ष्य सन् 1978 में विश्व स्वास्थ्य-संगठन के 'अल्मा-आता घोषणा-पत्र' में निर्धारित किया गया था।

स्वास्थ्य-सेवा के बारे में देश में भारी भ्रम है। इसे साधारणतया चिकित्सा-सेवा समझा जाता है किन्तु चिकित्सा-सेवा प्रत्येक दरवाजे तक नहीं पहुंचाई जा सकती। इसके विपरीत स्वास्थ्य-सेवा सर्वसुलभ की जा सकती है लेकिन चिकित्सा-सेवा जहां व्यय साध्य है, वहां स्वास्थ्य सेवा के विस्तार के लिए व्यापक जन-सहयोग की आवश्यकता है। चिकित्सा-सेवा सुलभ करना जन-साधारण की सामर्थ्य के बाहर है। भारत सरकार और राज्य सरकारें भी गांव-गांव में अस्पताल नहीं बना सकतीं। विश्व स्वास्थ्य संगठन की घोषणा के अनुसार भारत सरकार सन् 2000 तक सभी के दरवाजे तक चिकित्सा सेवा पहुंचाने का प्रयत्न भी करेगी तो वह केवल रस्म की अदायगी ही होगी। गिनती के लिए अस्पतालों की स्थापना से कोई लाभ नहीं होगा उनके लिए न तो उपयुक्त भवन बनाये जायेंगे और न ही औषधियों की व्यवस्था होगी। कीमती उपकरणों और यंत्रों की कौन कहे।

इसीलिए सरकार द्वारा देश भर में प्राथमिक चिकित्सालयों का जाल बिछाया गया है। उनके माध्यम से रोगियों की चिकित्सा के साथ-साथ गांवों में स्वास्थ्य के प्रति जागृति फैलाने की चेष्टा की जा रही है। इसके अच्छे परिणाम निकले हैं। अनेक प्रकार के संक्रामक रोग समाप्त हो गये हैं। कुछ रोगों की विभीषिका घटी है। बच्चों की जन्म-दर प्रति हजार बयालीस से घट कर 30 हो गयी है। इसी तरह मृत्यु दर में भी 60 प्रतिशत की घटोत्तरी हुई है। स्वराज के समय नागरिकों की औसत आयु जहाँ 32 वर्ष थी, अब 59 वर्ष हो गई है।

प्राथमिक चिकित्सा केन्द्र

भारत में 5 लाख 79 हजार 132 गांव हैं। इसमें 20534 गांव में प्राथमिक चिकित्सा केन्द्र स्थापित किए जा चुके हैं। इन केन्द्रों के तहत 5 या 6 उपकेन्द्र, राज्य सरकारों द्वारा स्थापित किये गये हैं। प्रत्येक प्राथमिक चिकित्सा केन्द्र द्वारा करीब 30,000 की आबादी की सेवा की अपेक्षा की जाती है। इस हिसाब से करीब 62 करोड़ की ग्रामीण आबादी को प्राथमिक चिकित्सा केन्द्रों का लाभ सुलभ हो गया है। यह सेवा सन् 2000 तक और बढ़ा दी जाएगी। लेकिन इन अस्पतालों की स्थिति अच्छी नहीं है। इनमें अधिकांश में भवन नहीं हैं। करीब 15 प्रतिशत केन्द्रों में डाक्टर नदारद हैं। एक केन्द्र के डाक्टर दूसरे केन्द्र का भी काम संभालते हैं। शेष में, औसत एक डाक्टर हैं, जब कि वहाँ कम से कम चार डाक्टर चाहिये- तीन एलोपैथ और एक भारतीय चिकित्सा प्रणाली का डाक्टर।

दिसम्बर 1990 तक की सूचना के अनुसार ग्रामीण क्षेत्रों के सरकारी अस्पतालों में केवल 23832 डाक्टर कार्यरत थे जबकि प्राथमिक चिकित्सा केन्द्रों की संख्या 25 हजार से अधिक है। ऐसी बात नहीं कि डाक्टरों का अभाव है। समस्या यह है कि वे गांवों में जाना नहीं चाहते। एक ओर ग्रामीण चिकित्सालयों में डाक्टरों के स्थान रिक्त हैं। दूसरी ओर रोजगार दिलाऊ दफ्तरों में हजारों डाक्टरों के नाम दर्ज हैं। इस स्थिति को दूर करने के लिए डाक्टरों को प्रथम 5 वर्षों तक गांव में काम करना अनिवार्य कर दिया जाना चाहिये। इस प्रकार के कानून को जन समर्थन प्राप्त होगा।

ग्रामीण चिकित्सकों का कैडर

ग्रामीण चिकित्सालयों में काम करने वाले डाक्टरों का एक विशेष संवर्ग (कैडर) बनाना चाहिये तथा उन्हें विशेष रूप से प्रशिक्षित किया जाना चाहिये क्योंकि ग्रामीण डाक्टरों को विशेष परिस्थितियों का सामना करना पड़ता है। शहरी क्षेत्रों के डाक्टरों को तरह-तरह के विशेषज्ञों के साथ-साथ, तरह-तरह के जाँच केन्द्रों (लेबोरेट्रीज) की सहायता सहज ही मिल जाती है।

जबकि ग्रामीण क्षेत्रों के डाक्टरों को अपने अनुभव के आधार पर काम करना पड़ता है। वे अपने प्रत्येक मरीज को, विशेष जांच के लिए शहरों में नहीं भेज सकते। उन्हें एक ही साथ नेत्र-विशेषज्ञ, उदर-रोग विशेषज्ञ, हृदय-रोग विशेषज्ञ और स्नायु रोगों के विशेषज्ञों की भूमिका अदा करनी होती है। लेडी डाक्टर के अभाव में उन्हें स्त्री रोगों को भी देखना पड़ता है।

ग्रामीण डाक्टरों को शहरी डाक्टरों की तरह, चन्द घन्टों में एक्स-रे की रिपोर्ट सुलभ नहीं। कहीं-कहीं तो मल-मूत्र, रक्त आदि की जाँच की कोई व्यवस्था नहीं होती। गांवों में पेटेन्ट दवाएं मिल भी जाती हैं परन्तु मिक्सचर या पाउडर बनाने वाले नहीं मिलते। बिजली के अभाव में आधुनिक यंत्रों और उपकरणों का भी प्रयोग नहीं होता। अनेक दवाओं को वांछित परिणाम में मिलाकर चूर्ण बनाने वाले मेडिकल स्टाफ भी नहीं मिलते। गांवों में बिजली के अभाव में उपलब्ध यंत्रों की सेवायें भी सुलभ नहीं होती।

ग्रामीण चिकित्सा-सेवा के लिए विशेष रूप से नियुक्त और प्रशिक्षित डाक्टरों को गांव में जाने पर भी कोई एतराज नहीं होगा। ग्रामीण क्षेत्रों में काम करने वाले डाक्टरों को देशी-चिकित्सा-प्रणाली का भी काम-चलाऊ ज्ञान होना चाहिए। उन्हें अपने इलाकों में उपलब्ध जड़ी-बूटियों, पौधों, फल, पत्तों आदि की उपयोगिता से परिचित होना चाहिए। ऐसा करने से वे ग्रामीण क्षेत्रों के मरीजों को, स्थानीय जड़ी-बूटियों का उपयोग करने की सलाह दे सकेंगे। इसका लाभ यह होगा कि ग्रामीणों को मुफ्त दवा मिल जायगी। इससे ग्रामीणों में जड़ी बूटियां और रस-रसायन के उत्पादन, संरक्षण, भण्डार और निर्यात में रुचि बढ़ जायगी।

शहर की हवा, गांव की हवा

गांव में कहा जाता है शहर की दवा से गांव की हवा ज्यादा लाभदायक होती है। सर्वज्ञात है कि शहरों में प्रदूषण अधिक होता है। आज दिल्ली की हालत इतनी खराब है कि रात दस-ग्यारह बजे तक तारे दिखाई नहीं देते। पूनम का चांद भी एक निर्जीव रोटी की तरह आसमान में तैरता दिखाई देता है। धूल और धुंए से शाम को कुहासे का दृश्य दिखाई देता है। इस दृष्टि से गांव के लोग निश्चित रूप से भाग्यशाली हैं। वे शहरों के अत्यन्त प्रदूषित वातावरण से मुक्त हैं।

शहरों के अन्धाधुन्ध अनुकरण तथा सफाई के अभाव में अब गांवों में भी प्रदूषण का खतरा हो गया है। अतएव, जरूरत इस बात की है कि ग्रामीणों को इस प्रदूषण के दुष्परिणामों से अवगत कराया जाय। उन्हें अपने गांव को प्रदूषण-विहीन रखने की सीख दी जाए।

ग्राम्य स्वास्थ्य रक्षक

तत्कालीन स्वर्गीय स्वास्थ्य मंत्री श्री राजनारायण के दबाव पर 1978 में नियुक्त ग्राम स्वास्थ्य रक्षकों की भूमिका, ग्रामीण प्रदूषण के निवारण में अहम् होगी। लगभग सभी राज्यों के पंचायतों में तीन लाख सत्ताईस हजार स्वास्थ्य रक्षक तैनात हैं। उन्हें आज भी केवल पचास रुपये महीना दिया जाता है। यह बहुत ही नगण्य है। इन स्वास्थ्य रक्षकों के लिए बरस-दो-बरस पर खण्ड-स्तर पर प्रशिक्षण शिविर लगाया जाना चाहिये। इन्हें स्वास्थ्य, सफाई और प्राथमिक चिकित्सा के सिद्धान्तों से अवगत कराना चाहिये। इन्हें स्वच्छता, प्रदूषण-निवारण, पर्यावरण विकास, सामाजिक-वानिकी, पोषाहार, सुलभ-शौचालय आदि को बढ़ावा देने योग्य बनाना चाहिये। इन स्वास्थ्य रक्षकों को, बच्चों को समय पर टीका लगवाने की भी जिम्मेदारी देनी चाहिए तथा उनमें स्वयं सेवक की भावना उत्पन्न करनी चाहिए। इन्हें गांव में स्वास्थ्य की स्थिति के सम्बन्ध में आंकड़ा जमा करने तथा कुष्ठ रोगियों और दृष्टिहीनों की खोज का भी काम देना चाहिए। इनके माध्यम से अन्धविश्वास-निवारण तथा परिवार-नियोजन के प्रचार का भी काम लिया जा सकता है।

भूत-विद्या के नाम पर, भोले-भाले लोगों को ठगने वाले लोगों को पकड़ कर उन्हें नियमानुसार दण्ड देना चाहिए। उत्तम काम करने वाले स्वास्थ्य रक्षकों को राष्ट्रीय पुरस्कार से काफी प्रोत्साहित किया जा सकता है।

इन स्वास्थ्य रक्षकों द्वारा समय पर कुओं और नालियों में कीटनाशक दवाइयां दे दी जाएं और हैजा इत्यादि के टीके लगा दियो जाएं तो गांव में रोगो का प्रकोप बहुत घट जायेगा। यह दुर्भाग्य की बात है कि इन्हें प्रथमोपचार के लिए साधारण दवाओं और अन्य उपचार की चीजों की सप्लाई बन्द कर दी गई हैं। इसे फिर से चालू किया जाना अत्यावश्यक है। असम, गुजरात, मध्यप्रदेश, उड़ीसा, बिहार, सिक्किम, राजस्थान, कश्मीर, उत्तर प्रदेश आदि में जहाँ राष्ट्रीय स्वास्थ्य कार्यक्रम के तहत निर्धारित लक्ष्य पूरे नहीं हुए हैं, वहां के ग्रामीण-स्वास्थ्य रक्षकों को विशेष रूप से प्रेरित किये जाने की आवश्यकता है।

मेडिकल छात्र

देश में अभी 128 मेडिकल कालेज हैं । इनके छात्रों को परीक्षा पास करने का बाद, कम से कम छः महीने के लिए एक गांव में बतौर प्रैक्टिकल के लिए तैनात करना चाहिये तथा उन्हें गांव विशेष में स्वास्थ्य की स्थिति पर एक शोध-पत्र तैयार करने का निर्देश देना चाहिये ।

धूम्रपान विरोधी अभियान

धूम्रपान के कारण हर साल हजारों व्यक्ति खांसी, दमा, कैंसर और ह्रदय रोग के शिकार होते हैं । अतः ग्रामीणों को धूम्रपान के खतरे से अवगत कराने के लिए, सभी जन संचार साधनों-समाचार-पत्रों, आकाशवाणी, दूरदर्शन इत्यादि का उपयोग किया जाना चाहिये । इसी प्रकार धूम्रपान की सामग्रियां बनाने वाली कम्पनियों पर, कर की दर, तीन-चार गुनी बढ़ा देनी चाहिये । ग्रामीण विद्यालयों में योग और प्राकृतिक-चिकित्सा का प्रशिक्षण देना चाहिये ताकि लोगों को अपनी चिकित्सा का सरल उपाय मालूम हो जाय । साथ ही, रोगों के कारणों को निर्मूल करने की शिक्षा मिल जाय । इसमें कोई खास खर्च भी नहीं होगा । गरीब से गरीब आदमी इसका लाभ उठा सकेगा ।

केन्द्रीय योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा परिषद् को इसके लिए सस्ता साहित्य तैयार कर वितरित कराना चाहिये ।

कुष्ठ-रोग निवारण

देश के 196 जिलों में कुष्ठ-रोग का प्रकोप ज्यादा है । ताजे आंकड़ों के अनुसार देश में कुष्ठ-रोग निवारण अभियान के फलस्वरूप कुष्ठ रोगियों की संख्या, कम से कम 40 प्रतिशत घटी है । फिर भी अभी 25 लाख व्यक्ति इस रोग से ग्रस्त हैं । इनमें अधिकांश शहरों में भिक्षाटन कर रहे हैं । इनके लिए शहरों में शरणालय बनाये जाने की आवश्यकता है । यहां इनकी चिकित्सा का भी प्रबन्ध हो सकता है और क्षुधा-पूर्ति भी की जा सकती है । इससे इनके मार्फत रोग के प्रसार का काम रुकेगा ।

गांवों में कुष्ठ रोगियों की बड़ी उपेक्षा होती है । इसे ला-इलाज मर्ज समझा जाता है, जबकि इसका इलाज हो सकता है । हजारों कुष्ठ-रोगियों को ठीक कर उन्हें स्वयं रोजगार करने के योग्य बनाया गया है । इसकी जानकारी कम लोगों को है । 1983 से कुष्ठ-उन्मूलन कार्यक्रम के अन्तर्गत, कुष्ठ रोगियों की खोज के लिए देश में करीब दो हजार इकाइयां काम कर रही हैं । इन इकाइयों द्वारा करीब 21 लाख रोगियों के इलाज का प्रबंध किया गया था, जिनमें पौने दो लाख आरोग्य लाभ कर चुके हैं । सबसे अच्छी बात यह है कि कुष्ठ रोगयों के इलाज के लिए डाक्टरों को 49 अस्पतालों में विशेष रूप से प्रशिक्षण दिया जा रहा है । इसी प्रकार प्राथमिक केन्द्रों में क्षय रोग के इलाज के प्रबन्ध से इस रोग पर भी नियंत्रण सुनिश्चित हो गया है परन्तु इसका समूल निवारण तभी होगा, जबकि सभी बच्चों को बी०सी०जी० (B.C.G.) के टीके लगवा दिये जायेंगे । यौन रोगों विशेषकर 'एड्स' जैसी भयंकर बीमारियों पर तभी नियंत्रण होगा, जबकि देश में इसके प्रति पूर्ण रूप से जागरूकता लाई जायेगी ।

विश्व स्वास्थ्य संगठन के सहयोग से, भारत में करीब 400 डाक्टर और उनके सहायक 'एड्स' की रोकथाम एवं चिकित्सा के लिए विशेष प्रशिक्षण प्राप्त कर चुके हैं लेकिन 'एड्स' की कारगर दवा के अभाव में, इन डाक्टरों को सीमित सफलता मिलेगी ।

आबादी नियंत्रण

देश में साधनों की तुलना में आबादी अधिक बढ़ गयी है । इसका स्वास्थ्य पर सीधा असर पड़ रहा है । न लोगों को पौष्टिक आहार मिल रहा है और न ही जीविका के साधन । स्वभावतः लोग तरह-तरह के रोगों के शिकार हो रहे हैं । अतएव, भारत सरकार ने 1976 से आबादी पर नियंत्रण की योजनाओं को उच्च प्राथमिकता दे रखी है । फिर भी, 1981 में जहाँ देश की आबादी 68.40 करोड़ थी, इस वर्ष में 84 करोड़ 43 लाख हो गयी । अर्थात् दस वर्ष में 17 करोड़ की वृद्धि । देश की अर्थव्यवस्था आबादी में वृद्धि की यह दर बर्दाश्त नहीं कर सकती । इस लिए सरकार ने, हाल ही परिवार कल्याण के लिए 13-सूत्रीय कार्यक्रम भी तैयार किया है, जिसे अंतिम रूप देने के पहले राज्यों के स्वास्थ्य मंत्रियों की सलाह ली जाएगी ।

भारत का क्षेत्रफल, विश्व का केवल 2.4 प्रतिशत है । परन्तु यहां की आबादी, विश्व-आबादी का 16 प्रतिशत है । इस असंतुलन को दूर करना होगा, अन्यथा बढ़ती हुई आबादी के लिए भोजन, कपड़ा और मकान जुटाना असंभव हो जायेगा ।

आबादी-वृद्धि का दुष्परिणाम

आजादी के बाद जनसंख्या में दुगुनी वृद्धि का नतीजा यह हुआ है कि बस्तियां फैलती गयीं । कृषि भूमि घटती गयी । नगरों ने आस-पास की बस्तियां छीन लीं । सैंकड़ों गांव बदल कर नगर बन गये । दिल्ली के बारे में जानते ही हैं कि समूचा राज्य, एक महानगर बन गया है । इसके लगभग सभी गांव समाप्त हो गये । अब दिल्ली वाले गाजियाबाद (उ०प्र०), गुड़गांव, बल्लभगढ़ तथा फरीदबाद (हरियाणा) में जाकर बसने लग गये हैं । कृषि उत्पादन में दुगुनी वृद्धि के बावजूद, प्रति व्यक्ति अनाज की उपलब्धि कम हो गयी है । सात-सात पंचवर्षीय योजनाओं को लागू किये जाने पर भी आज चार करोड़ लोग बेघर हैं । मतलब यह स्वास्थ्य-नीति के तहत परिवार नियोजन की प्रधानता दीर्घकाल तक बनी रहेगी ।

सरकारी योजना

इस लिए सरकार ने सन् 2000 तक, जन्मदर में दो प्रतिशत की वार्षिक वृद्धि को घटा कर एक प्रतिशत करने का निश्चय किया है । इसके लिए व्यापक संगठन तैयार है आज देश का कोई गांव नहीं, जहाँ मातृ-शिशु सेवा नहीं पहुंची है लेकिन गांवों में जागृति का अभाव है । इसीलिए पिछले दशक में, शहरों की संख्या में 660 की वृद्धि के बावजूद, शहरी आबादी केवल 36 प्रतिशत बढ़ी, जबकि 1971-81 में 46 प्रतिशत बढ़ी थी । इसके विपरीत ग्रामीण आबादी में पिछले दशक में वृद्धि की दर पूर्ववत् कायम रही ।

गांवों में 20534 प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र तथा एक लाख 30 हजार 400 उपकेन्द्र स्थापित किये जा चुके हैं । इनमें एक डाक्टर के अलावा एक ग्राम स्वास्थ्य रक्षक (गाइड) और एक प्रशिक्षित दाई अवश्य तैनात हैं । अतः किसी को शिकायत नहीं हो सकती कि उसके क्षेत्र में परिवार नियोजन के लिए परामर्श देने वाले कोई नहीं है लेकिन सबसे ज्यादा बात उनकी मानी जायेगी, जो स्वयं परिवार-नियोजन कर रहे हैं । वास्तव में आबादी पर नियंत्रण की समस्या एक राष्ट्रीय समस्या है । अतः इसमें प्रबुद्ध नागरिकों को स्वयं दिलचस्पी रखनी चाहिए ।

बाल विवाह रोकें

ध्यान रखना चाहिए कि युवक-युवतियों के विवाह इक्कीस वर्ष के पहले न हों । अठारह वर्ष के कम की बालिकाओं की शादी अवैध है । कच्ची उम्र में शादी स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है । कच्ची उम्र में गर्भ धारण करने पर बच्चा व जच्चा दोनों पर खतरा हो सकता है । बाल विवाह के कारण भारत में शिशुओं की मृत्यु दर औसत से अधिक है ।

गांव में परिवार-नियोजन आन्दोलन को तेज करने के लिए प्रत्येक गांव में महिला-मण्डल की स्थापना होनी चाहिए । परिवार को छोटा रखने की उपयोगिता पर, आकाशवाणी, दूरदर्शन और पत्रिकाओं द्वारा प्रचार उपयोगी है परन्तु इन साधनों की पहुंच गांव के गरीबों तक नहीं है ।

अतएव, व्यक्तिगत सम्पर्क से परिवार नियोजन कार्यक्रम ज्यादा सफल होगा । बच्चा दीर्घजीवी हो और जन्म से ही स्वस्थ हो, इसलिए गर्भवती माताओं को टेटनेस टाक्साइड देने तथा शिशुओं को डी०पी०टी०, पोलियो, बी०सी०जी० और खसरे के टीके लगाने की व्यवस्था सारे देश में हो गई है । इसका लाभ सभी को उठाना चाहिये ।

ताजे आंकड़ों के अनुसार 43 प्रतिशत दम्पत्ति परिवार नियोजन के लिए एक न एक उपाय कर रहे हैं । इनमें से प्रत्येक दम्पत्ति कम से कम अपने एक सम्बन्धी को परिवार नियोजन के लिए तैयार कर सकें तो आबादी को नियंत्रित करने का राष्ट्रीय लक्ष्य, एक साल में ही पूरा हो जाय ।

परिवार और देश को सुखी और सम्पन्न बनाने अथवा इसकी सुरक्षा की गारंटी के लिए यह जरूरी है कि वायुमण्डल और जल प्रदूषित न हों । प्रत्येक परिवार को अपने आस-पास पर्यावरण को शुद्ध रखना चाहिए । इसके लिए हरियाली जरुरी है । अतः प्रत्येक नागरिक को वृक्ष लगाना और उसका पोषण करना चाहिए । साथ ही जल, विशेष कर, पेय-जल के साधनों को भी परिशुद्ध रखना चाहिए । संतुलित आहार लेना चाहिए तथा सम्यक् व्यायाम करना चाहिए । साथ ही, बच्चों को खेलने के लिए पर्याप्त अवसर देना चाहिए । इसके बिना हम स्वस्थ भारत का निर्माण नहीं कर सकते ।

8/2 बी-285 जनकपुरी
नई दिल्ली-110 058

ग्रामीण विकास के लिए विज्ञान और प्रौद्योगिकी

राम नारायण शर्मा

स्वतंत्रता के पश्चात् हमारे देश के सामने एक महत्वपूर्ण सवाल यह रहा है कि हम कैसे ग्रामीण क्षेत्रों का विकास करें। ऐसे कौन से तरीके अपनायें जिससे गांव शहरों पर निर्भर नहीं रहें और ग्रामवासियों को रोजगार की तलाश में शहरों की ओर न जाना पड़े। उनके लिए संचार, परिवहन, ऊर्जा, स्वास्थ्य, शिक्षा और रोजगार जैसी सभी बुनियादी सुविधाएं गांव में ही उपलब्ध हो जाएं।

देश में व्यापक आर्थिक विपन्नता, निरक्षरता और लगातार बढ़ती जनसंख्या को देखते हुए ग्रामीण क्षेत्रों के विकास के लिए अनेक कठिनाइयां आती हैं। भारत ने विज्ञान और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में बहुत प्रगति की है लेकिन गांवों के लोगों के विकास के लिए प्रौद्योगिकी के उपयोग पर विशेष ध्यान देना जरूरी है। नई प्रौद्योगिकी को अपनाने के लिए दृष्टिकोण, व्यवहार कौशल तथा विश्वासों और मूल्यों में परिवर्तन आवश्यक है।

भारत सरकार द्वारा मार्च 1958 में एक वैज्ञानिक नीति प्रस्ताव देश के विकास के लिए स्वीकार किया गया जिसमें विज्ञान और प्रौद्योगिकी की शक्तिशाली भूमिका पर बल दिया गया। इसमें कहा गया था कि : "आधुनिक युग में राष्ट्रीय समृद्धि के लिए लोगों में उत्साह के अतिरिक्त प्रौद्योगिकी, कच्चे माल और पूंजी जैसे तीन संसाधनों का प्रभावशाली संयोग अनिवार्य है। इसमें से प्रौद्योगिकी सम्भवतः सबसे ज्यादा महत्वपूर्ण है क्योंकि नई वैज्ञानिक तकनीकों का विकास और अपनाये जाने से वास्तव में प्राकृतिक संसाधनों की कमी को दूर किया जा सकता है और इससे पूंजी की आवश्यकता भी कम की जा सकती है।"

पिछले दशकों से वैज्ञानिक नीति प्रस्ताव को सच्चे रूप में लागू करने के लिए बड़े पैमाने पर प्रयास जारी रहे हैं। यद्यपि विभिन्न कारणों से विशेषकर जनसंख्या में लगातार भारी वृद्धि के कारण वैज्ञानिक विकास और प्रगति का लोगों के जीवन स्तर पर अपेक्षित स्तर पर प्रभाव नहीं पड़ पाया लेकिन सरकार के प्रयास सतत् जारी हैं।

विश्व भर में यह स्वीकार किया गया है कि विज्ञान और प्रौद्योगिकी समाज में आमूल परिवर्तन लाने वाली अत्यधिक शक्तिशाली प्रेरक शक्तियां हैं और मानव कल्याण से सम्बद्ध सभी पक्षों में विज्ञान और प्रौद्योगिकी का समुचित और विवेकपूर्ण उपयोग किये जाने से वांछित सामाजिक और आर्थिक परिवर्तन हो सकता है। विकसित और विकासशील देशों में भौतिक स्थिति और सामाजिक पहलुओं के बीच अन्तर और बढ़ गया है। इसका मुख्य कारण विकसित देशों में तेजी से वैज्ञानिक विकास के फलस्वरूप वहां चहुंमुखी प्रगति होना है। यह स्पष्ट है कि विकासशील देशों को अपनी उन्नति के लिए विज्ञान और प्रौद्योगिकी पर अधिकाधिक निर्भर रहना पड़ेगा लेकिन विज्ञान और प्रौद्योगिकी का प्रयोग करने और उसे अपनाये जाने के बारे में बड़ी सावधानीपूर्वक योजना बनानी होगी। भारत ग्रामीण क्षेत्रों में बसा है अतः ग्रामीण क्षेत्रों के विकास के लिए विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी का प्रयोग अच्छा साबित हो सकता है।

वर्तमान स्थिति

छठी योजनावधि में यह अनुमान था कि ग्रामीण क्षेत्रों में लगभग 22 करोड़ और शहरी क्षेत्रों में लगभग 5 करोड़ लोग गरीबी के स्तर से नीचे का जीवन बिता रहे हैं। वर्ष 1984-85 में ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबी का अनुपात 39.9 प्रतिशत और शहरी क्षेत्रों में 27.8 प्रतिशत रहा था। सातवीं योजना की अवधि में गरीबी के अनुपात को 36.9 प्रतिशत के औसत से घटाकर 25.8 प्रतिशत करने का लक्ष्य निर्धारित किया गया। इसके लिए निवेश, वैज्ञानिक और तकनीकी आदानों तथा प्रबन्ध की आवश्यकता है। सरकार द्वारा ग्रामीण विकास और न्यूनतम आवश्यकताएं पूरी करने के लिए अनेक कार्यक्रम चलाये जा रहे हैं समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम, राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम, सूखा बहुल क्षेत्र कार्यक्रम, अन्त्योदय योजना, जवाहर रोजगार योजना ऐसे ही कुछ कार्यक्रम हैं। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् के तहत राष्ट्रीय प्रदर्शन कार्यक्रमों, परिचालन अनुसंधान परियोजनाओं, कृषि विज्ञान केन्द्रों तथा प्रयोगशाला से खेतों तक अनुसंधान परिणाम पहुंचाने जैसे कार्यक्रमों के रूप में विशेष आधारभूत सुविधाएं उपलब्ध कराई जा रही हैं। इसी प्रकार ग्रामीण विकास के अतिरिक्त अन्य सामुदायिक एजेन्सियां भी अपने कार्यक्रम चला रही हैं। यद्यपि इस समय लगभग 30 सरकारी एजेन्सियां और विभाग

ग्रामीण विकास के विभिन्न कार्यक्रम लागू कर रही हैं लेकिन वर्तमान परिस्थिति को देखते हुए एक समन्वित और सम्पूर्ण नीति बनाना वास्तव में महत्वपूर्ण है जिससे आधुनिक विज्ञान और प्रौद्योगिकी को ग्रामीण क्षेत्रों के लोगों का दैनिक जीवन का हिस्सा बनाया जा सके । ग्रामीण जनसंख्या को जिन प्रमुख समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है उसमें बेरोजगारी, निरक्षरता, व्यावसायिक निपुणता का अभाव, खराब स्वास्थ्य, पीने के पानी की कमी, कुपोषण और जरूरी चिकित्सा सुविधाओं का अभाव तथा अपर्याप्त आवास जैसी समस्याएं शामिल हैं । इन समस्याओं के समाधान के लिए विज्ञान और प्रौद्योगिकी के माध्यम को अपनाना आवश्यक है ।

देश में इस समय 5,91,000 गांव हैं और लगभग 99 प्रतिशत गांवों में इस समय विकास का एक-न-एक कार्यक्रम चल रहा है । अब महत्वपूर्ण यह है कि इन कार्यक्रमों में विज्ञान और प्रौद्योगिकी को शामिल किया जाए ताकि इन कार्यक्रमों की कुशलता में सुधार हो, उत्पादकता में वृद्धि हो और विभिन्न कार्यों की लागत में कमी आए, जिससे लोगों का जीवन समृद्ध एवं सुखमय हो सके ।

प्रौद्योगिकी का चुनाव

भारत एक विशाल आकार और विविधताओं वाला देश है जिसमें 70 प्रतिशत जनसंख्या गांवों में रहती है । इस ग्रामीण जनसंख्या के लिए कृषि, सिंचाई, जल-प्रबन्ध, शिक्षा, स्वास्थ्य, ऊर्जा, उद्योग, रोजगार-सृजन, परिवहन, संचार, आवास जैसे क्षेत्रों में विज्ञान और प्रौद्योगिकी को शामिल करना बहुत महत्वपूर्ण है । ग्रामीण क्षेत्रों में औसत मासिक आय का स्तर 101.8 रुपये है, जबकि शहरी क्षेत्रों में यह 118 रुपये है । भूमि जोतों का आकार बहुत छोटा है और जनसंख्या में वृद्धि के कारण यह और भी छोटा हो गया है इसलिए उत्पादकता और आर्थिक सक्षमता बढ़ाने के लिए प्रौद्योगिकी को अपनाया जाना बहुत जरूरी है । इसके लिए व्यवहार में व्यापक परिवर्तन आवश्यक है । ग्रामीण विकास का अर्थ मात्र ऐसी साधारण प्रौद्योगिकी का इस्तेमाल करना मात्र नहीं है जिसे बहुत से लोग उपयुक्त प्रौद्योगिकी मानते हों, जबकि वह पुरानी और अनुपयुक्त हो गई हो । हमें क्षेत्र का अवलोकन करना होगा जिसमें उपलब्ध दक्षता, वित्तीय और प्राकृतिक संसाधनों को ध्यान में रखते हुए एवं ग्रामीण लोगों की बुनियादी आवश्यकताओं को पूरा करने वाली प्रौद्योगिकी का पता लगाने तथा उन्हें लागू करने के लिए क्षेत्र से सम्बद्ध लोगों के साथ बातचीत करके उनकी समस्याओं का पता लगाया जाए ताकि प्रौद्योगिकी की प्रगति का सर्वेक्षण समयबद्ध होता रहे एवं उसमें उपयुक्त सुधार किया जा सके । कई समस्याओं के सन्दर्भ में इलेक्ट्रानिक्स, अन्तरिक्ष, जैव प्रौद्योगिकी जैसे विज्ञान और प्रौद्योगिकी के आधुनिक क्षेत्र ग्रामीण विकास के लिए बहुत सहायक सिद्ध हो सकते हैं ।

विज्ञान और प्रौद्योगिकी - आधारभूत ढांचा

देश में विज्ञान और प्रौद्योगिकी के एक व्यापक और विविधतापूर्ण आधारभूत ढांचे के तहत भारत सरकार के विभिन्न मंत्रालयों के अधीन अनेक संस्थान स्थापित किये गये हैं जो आणविक ऊर्जा जैव-प्रौद्योगिकी, अन्तरिक्ष विज्ञान, औद्योगिक, महासागर और इलेक्ट्रानिक्स विकास से सम्बद्ध हैं । इन संस्थाओं के अधीन 154 अनुसंधान प्रयोगशालाएं कार्यरत हैं । यही नहीं, 400 वैकल्पिक अनुसंधान संस्थान ऐसे हैं जिनकी वित्त-व्यवस्था गैर-सरकारी संस्थाओं द्वारा की जाती है । लगभग 174 संस्थान रेलवे, संचार, पर्यावरण और वन जैसे मंत्रालयों से सम्बद्ध हैं । इनके अतिरिक्त 10 सहकारी अनुसंधान संस्थान, 180 संस्थान राज्यों द्वारा वित्त-पोषित हैं और 142 विश्वविद्यालयों, 24 विद्यालयों के समकक्ष, 10 राष्ट्रीय महत्व के संस्थान, 179 इंजीनियरी संस्थान और विभिन्न उद्योगों के अपने 1100 से अधिक अनुसंधान तथा विकास केन्द्र हैं । देश में 40 लाख वैज्ञानिक प्रौद्योगिकी कर्मियों के रूप में कार्यरत हैं । अब आवश्यकता इस बात की है कि इस विशाल आधारभूत ढांचे का इस्तेमाल समाज के लाभ के लिए सुनिश्चित किया जाए । विभिन्न लोगों के लिए विभिन्न समूहों को ध्यान में रखते हुए न केवल उनके लाभ के लिए विज्ञान और प्रौद्योगिकी की विशिष्ट परियोजनाएं बनाकर लोगों को उसमें सहभागी बनाना होगा बल्कि लोगों को एक वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास करने के लिए प्रेरित करना होगा ।

कृषि

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् के अधीन कृषि गतिविधियों से सम्बद्ध विभिन्न संगठनों का एक विशाल नेटवर्क मौजूद है । इस नेटवर्क में विभिन्न राज्यों के 26 कृषि विश्वविद्यालय, 20 राष्ट्रीय अनुसंधान केन्द्र, 43 केन्द्रीय अनुसंधान संस्थान, 9 परियोजना निदेशालय और 4 राष्ट्रीय ब्यूरो हैं । प्रौद्योगिकी को प्रयोगशाला से निकालकर खेतों तक पहुंचाने में भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है । कृषि का हमारे सकल राष्ट्रीय उत्पाद में 40 प्रतिशत और कुल निर्यात में 60 प्रतिशत योगदान है ।

हमारे देश की 70 प्रतिशत जनसंख्या खेती से ही

अपना जीवन निर्वाह करती है । अनुसंधान पर आधारित वैज्ञानिक विधियों जिसमें कृषि की नई विधियां, कीट नियंत्रण, जल प्रबन्ध, भूमि सुधार, प्रजनन अनुसंधान आदि प्रमुख हैं का इस्तेमाल इन क्षेत्रों में किये जाने की आवश्यकता है । नये-नये अनुसंधानों के आधार पर कृषि उत्पादन में प्रतिवर्ष 3.32 प्रतिशत की औसत वृद्धि हुई है । वर्ष 1989 में खाद्यान्न का उत्पादन 17 करोड़ 20 लाख टन तक पहुंच गया था जबकि छठे दशक के वर्षों में खाद्यान्न उत्पादन लगभग 5 करोड़ टन मात्र था । हमारे यह मौजूद 106 कृषि विज्ञान केन्द्र प्रौद्योगिकी के हस्तांतरण सम्बन्धी मुख्य गतिविधियों और स्थानीय लोगों में कृषि और ग्रामीण विकास के लिए विज्ञान और प्रौद्योगिकी प्रशिक्षण देने के प्रमुख केन्द्र बन सकते हैं । कृषि, उद्यान-कृषि, मछली-पालन, जलचर संवर्द्धन और मुर्गीपालन जैसी गतिविधियों के छोटे समन्वित केन्द्र विकसित किये जाने से लोगों को वास्तव में लाभ हो सकता है ।

ऊर्जा

उर्वरकों, खेतों में पानी पहुंचाने और परिवहन जैसे कृषि कार्यों के लिए ऊर्जा की आवश्यकता होती है । ग्रामीण क्षेत्रों में विकास कार्यों के लिए ऊर्जा की जरूरत पड़ती है । विकासशील देशों में प्रति व्यक्ति ऊर्जा की खपत 500 किलोग्राम कोयले के बराबर होती है । विकसित देशों की खपत इससे 10-20 गुणा ज्यादा है । इस समय भारत में ऊर्जा की खपत प्रति व्यक्ति मुश्किल से 200 किलोग्राम यानी विकासशील देशों की खपत से लगभग आधी है । आज भी भारत में इस्तेमाल की जाने वाली उर्जा की 45 प्रतिशत गैर वाणिज्यिक स्रोत बनी हुई है और काफी समय तक यही स्थिति बनी रहेगी इसलिए यह आवश्यक बन जाता है कि वैज्ञानिक आधार पर बड़े पैमाने पर वन-रोपण का काम किया जाए और ईंधन की लकड़ी की अपनी आवश्यकताओं को पूरा करने में ग्रामीण क्षेत्र में लोगों का सहयोग लिया जाए । 'टिश्यू कल्चर' की तकनीक से जीव संसाधन उत्पन्न करने से बड़े पैमाने पर जरूरतें पूरी होने की सम्भावनाएं बन गई हैं ।

गैर परम्परागत ऊर्जा के स्रोत जो कि बार-बार उपयोग में लाये जा सकते हैं छितरे हुए हैं और गैर प्रदूषक हैं; उन ग्रामीण क्षेत्रों के लिए विशेष महत्व रखते हैं, जहाँ अपनी जरुरतों के लिए उन्हें लम्बे समय तक बिजली मिलने की सम्भावना नहीं है । वर्ष 1988-89 तक 11 लाख से अधिक बायो गैस संयंत्र लगाये जा चुके हैं । लगभग 60 लाख धुआंरहित चूल्हे, एक लाख सौर कुक्कर, ४३३ सामुदायिक बायो गैस संयंत्र, 223 पम्प, 85 ऊर्जा ग्राम, 1085 सौर जरम पम्पिंग प्रणालियां 1275 सौर घरेलू प्रकाश प्रणालियां, 546 सामुदायिक प्रकाश और टेलीविजन प्रणालियां, 1294 सौर बैटरी चार्जिंग यूनिटें और 281 बायो गैस फायर हैं । यह स्पष्ट है कि यह प्रयास बहुत ही छोटे पैमाने पर हुआ है । इन सब कार्यक्रमों को बड़े पैमाने पर लागू किये जाने की और मौजूदा कार्यक्रमों के विस्तार की आवश्यकता है ।

रोजगार

ग्रामीण क्षेत्रों में लाभदायक रोजगार उपलब्ध कराने वाली आर्थिक गतिविधियां विज्ञान और प्रौद्योगिकीय आदानों को शामिल करके बढ़ायी जा सकती हैं नीचे दिए गये क्षेत्रों के लिए यह विशेष रूप से महत्वपूर्ण है–

1. कृषि पारिस्थितिकीय संरक्षण के लिए उपयुक्त कृषि विधियां और बीजों की बेहतर किस्में, मिश्रित समन्वित कृषि प्रणालियां और शिक्षा के माध्यम से भूमि का अनुकूलतम प्रयोग कृषि उत्पादन को बढ़ाने की दृष्टि से लाभदायक है ।
2. पशुओं की नस्ल व उनकी उत्पादकता में सुधार लाने के लिए आज नई-नई प्रौद्योगिकियां उपलब्ध हैं ।
3. हमारी राष्ट्रीय प्रयोगशालाओं द्वारा विकास प्रौद्योगिकियों का इस्तेमाल करके स्व-रोजगार के लिए लघु उद्योग लगाना तथा विज्ञान और प्रौद्योगिकी के आधार पर उद्यमशीलता का विकास करना ।
4. देहाती लोगों के लिए प्रशिक्षण और उनकी दक्षता में सुधार ।
5. विज्ञान और प्रौद्योगकी की साधारण शिक्षा, जागरुकता पैदा करना तथा वैज्ञानिक विधियों और दृष्टिकोणों को अधिक से अधिक लोगों तक पहुंचाना ।
6. स्वास्थ्य सेवा प्रणालियों के लिए कम लागत वाली नई विधियों का विकास किया जाना चाहिए ।

जल

ग्रामीण क्षेत्रों में पीने के पानी की उपलब्धता में सुधार लाने के लिए हर सम्भव प्रयास करना होगा । जल प्राप्त करने, उसके संरक्षण और पुनः प्रयोग में लाने के लिए वैज्ञानिक विधियों का विकास करके तथा उन्हें उपयोग में लाना जरुरी है । देहाती इलाकों में पीने के पानी की पूर्ति को उच्चतम प्राथमिकता देनी होगी । इस काम के लिए सामुदायिक सहभागिता, प्रौद्योगिकी हस्तांतरण, वर्तमान ग्रामीण जल पूर्ति प्रणालियों का मूल्यांकन, जल वितरण प्रणाली के रख-रखाव के बारे में अध्ययन करना,

पहाड़ी क्षेत्रों में जल-पूर्ति के लिए जल-स्रोतों के विकास और पुराने जल स्रोतों को पुनः चालू करना व छोटे बांधों का इस्तेमाल करना तथा पानी को पीने योग्य बनाने के लिए पानी को साफ करने हेतु समेकित उपायों का विकास करना आवश्यक है। खारे पानी को पीने योग्य बनाने के लिए "रिवर्स औसमोसिस', 'इलेक्ट्रोडायलिसिस' आदि जैसी प्रौद्योगिकी उपलब्ध हैं। देश में इन प्रौद्योगिकियों पर आधारित कई संयंत्र स्थापित किये गये हैं। जल स्रोतों का पता लगाने के लिए सुदूर संवेदन एक बहुत ही शक्तिशाली तकनीक है।

सूचना प्रौद्योगिकी

कृषि, सिंचाई, ऊर्जा, स्वास्थ्य, परिवार नियोजन, शिक्षा, रोजगार परिवहन जैसे क्षेत्रों में सूचना प्रौद्योगिकी का इस्तेमाल ग्रामीण क्षेत्र में व्यापक परिवर्तन लाने की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। स्थानीय रूप से उपलब्ध संसाधनों, दक्षताओं और आवश्यकताओं से सम्बन्धित जानकारी उपलब्ध होना प्रभावी योजना लागू करने के लिए बहुत जरूरी है। इलेक्ट्रानिक विभाग द्वारा 1975 में स्थापित नेशनल इन्फ्रामेटिक सेंटर ने एक जिला सूचना प्रणाली का विकास किया है। यह सेंटर देश के हर जिले में एक केंद्र स्थापित कर रहा है। राष्ट्रव्यापी उपग्रह संचार नेटवर्क पर आधारित बड़ी संख्या में प्रशिक्षण और सूचना हस्तांतरण कार्यक्रम तैयार किये हैं। इससे जिले और निचले स्तर पर योजना बनाने के लिए विश्वसनीय और मूल्यवान सूचना उपलब्ध कराने में मदद मिलेगी।

अन्तरिक्ष प्रौद्योगिकी

समुद्र में मछली पालन, लघु सिंचाई, पीने के पानी के लिए जल स्रोतों का पता लगाने, बंजर भूमि का पता लगाने, वनस्पति के मानचित्र बनाने, सूखे की स्थिति पर नजर रखने आदि जैसे कार्यों में सुदूर संवेदन प्रौद्योगिकी का व्यापक इस्तेमाल किया जाता है। अन्तरिक्ष बिम्बावली का प्रयोग करके देश के 370 से अधिक जिलों में जल मिलने की सम्भावना वाले क्षेत्र-मानचित्र तैयार किये गये हैं। इसमें सूखा बहुल क्षेत्र कार्यक्रम के अन्तर्गत आने वाले 91 जिले और जिला विकास कार्यक्रम के तहत आने वाले 20 जिले शामिल हैं।

जैव प्रौद्योगिकी

जैव प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में जैव उर्वरक बनाने, जलचर संवर्द्धन, टिश्यू कल्चर, तकनीकों के माध्यम से जैव संसाधनों का उत्पादन, पशुओं की नस्ल में सुधार लाने के लिए भ्रूण अन्तरण जैसी प्रौद्योगिकियों का विकास होने से देहाती क्षेत्रों में रोजगार पैदा करने और वहां दैनिक जीवन की गतिविधियों के लिए कार्य कुशलता और उत्पादकता बढ़ाने की काफी क्षमता बन गई है। इन सब प्रौद्योगिकियों को बड़े पैमाने पर लागू करने के लिए विधियों का विकास करना होगा।

पारिस्थितिकी

चिरस्थायी विकास की अवधारणा को ग्रामीण विकास और सामाजिक-आर्थिक प्रगति को सुनिश्चित करने के सन्दर्भ में देखा जाना चाहिए। यह विकास और प्रगति पर्यावरण को बिना क्षति पहुंचाए स्थानीय रूप से उपलब्ध प्राकृतिक संसाधनों के अनुकूलतम प्रयोग पर आधारित होनी चाहिए। प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण और आजीविका की सुरक्षा को सुनिश्चित करने के लिए उनका विवेकपूर्ण उपयोग किया जाना चाहिए।

हमारे देश में देहाती लोग प्राकृतिक संसाधनों के बहुत अच्छे संरक्षक हो सकते हैं बशर्ते कि उनमें जागरूकता पैदा करने और उन्हें शिक्षित करने के लिए कार्यक्रम चलाये जाएं। विकास प्रक्रिया की सफलता के लिए गांवों के गरीब लोगों को प्राकृतिक प्रणालियों के संरक्षण और सुरक्षा के काम में पूरी तरह भागीदार बनाया जाए।

कार्य नीति

ग्रामीण क्षेत्रों के लोगों को आज जिन समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है उनके समाधान के लिए वैज्ञानिक नीतियां, अध्ययन और सुधार बहुत जरूरी है। भारत भिन्न-भिन्न भौगोलिक और प्राकृतिक स्थितियों वाला विशाल देश है जहां पर ग्रामीण लोगों की अलग-अलग पृष्ठ भूमियां हैं। ऐसी स्थिति में सभी क्षेत्रों के लिए एक समान समाधान उपयुक्त नहीं होगा। ये समाधान तो स्थान विशेष के लिए उसके स्थानीय लोगों की दक्षताओं का पूरा-पूरा इस्तेमाल करते हुए तय किये जाने चाहिए। जैसा कि हमारे प्रथम प्रधानमंत्री ने कहा था, "केवल विज्ञान ही भूख और गरीबी की समस्याओं का हल कर सकता है।" हमें ग्रामीण विकास के सभी क्षेत्रों में विज्ञान का उपयोग करने के लक्ष्य को प्राप्त करने की दिशा में काम करना होगा क्योंकि अन्त में पूरे राष्ट्र का विकास ग्रामीण क्षेत्रों की तेजी से प्रगति पर निर्भर करेगा।

द्वारा श्री आर.के. गर्ग
प्लाट नं० 7
जनकपुरी प्रथम
इमली वाला फाटक
ज्योतिनगर, जयपुर (राज.) - 302005

ग्रामीण इलाकों में स्वास्थ्य सेवा

प्रभात कुमार सिंघल

भारत वर्ष गाँवों का देश है। कुल जनसंख्या की लगभग 70 प्रतिशत आबादी गांवों में निवास करती है। ग्रामीण जीवन अभी भी परंपरागत व्यवसाय प्रमुखतः खेती एवं मजदूरी पर निर्भर है। एक अनुमान लगाया गया है कि प्रतिदिन लगभग 60 हजार शिशु जन्म लेते हैं। इनमें से लगभग 20 से 25 हजार बच्चों की मृत्यु कुपोषण एवं वांछित चिकित्सा सुविधाओं के अभाव में हो जाती है।

अज्ञानता और शिक्षा की कमी, अंध विश्वास, चिकित्सा व्यवस्थाओं का न होना या चिकित्सा व्यवस्थाओं में कमी, निर्धनता, यातायात सुविधाओं का अभाव, स्टाफ की कमी, स्टाफ का मुख्यालय पर न रहना, उपचार सुविधाओं एवं संसाधनों का अभाव आदि ऐसे बिन्दु हैं जो ग्रामीण स्वास्थ्य की रक्षा करने में बाधक हैं। अनेक गांवों में शुद्ध पेयजल का अभाव भी एक महत्वपूर्ण कारण बनता है। इस कारण राजस्थान के डूंगरपुर, बांसवाड़ा एवं उदयपुर इलाकों में ग्रामीण क्षेत्रों में नारु रोग का भारी प्रकोप है।

ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले नागरिक चेतना के अभाव के कारण भी स्वास्थ्य सेवाओं से वंचित रह जाते हैं। ग्रामीण जन आज भी झाड़-फूंक, अंधविश्वासों के कारण ओझा-सयानों के चक्कर में जकड़े रहते हैं। जब उनकी आंख खुलती है तो बहुत देर हो चुकी होती है। कोटा स्थित महाराव भीम सिंह चिकित्सालय के मनोरोग विशेषज्ञ डा. एम०एल० अग्रवाल ने कई ऐसे रोगियों से मुझे मिलवाया जो ओझा-सयानों के चक्कर में उलझ कर अपने शरीर को अनेक जगह से दाग चुके थे। जब ऐसे लोग चिकित्सालय तक आते हैं रोग अत्यंत गंभीर रूप धारण कर लेता है।

स्वास्थ्य रक्षा के लिए अज्ञानता के साथ-साथ शिक्षा की कमी भी रुकावट बनती है। राजस्थान में महिलाओं, अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों में यह प्रतिशत और भी कम है। ग्रामों में बच्चों को शाला भेजने के लिए माता-पिता उदासीन नजर आते हैं। सरकार बच्चों को अधिक से अधिक संख्या में विद्यालय लाने का प्रयास प्रतिवर्ष करती है परंतु साक्षरता के प्रयास चेतना के अभाव में सफल उतने नहीं हो रहे हैं जितने होने चाहिए। शिक्षा का अभाव स्वास्थ्य रक्षा विशेषकर टीकाकरण कार्यक्रम एवं परिवार कल्याण में विशेष रूप से बाधक बनता है।

स्वास्थ्य रक्षा के लिए कुपोषणता भी एक बड़ी समस्या है। निर्धन परिवारों के बच्चों का स्वास्थ्य अत्यंत चिंतनीय विषय है। सरकार ने एकीकृत बाल विकास कार्यक्रम लागू किया है। इसमें कुपोषित बच्चों को 65 ग्राम एवं अत्यंत कुपोषित बच्चों को दुगुनी मात्रा में अतिरिक्त पोषाहार देने की व्यवस्था है। यह कार्यक्रम आंगनबाड़ी केंद्रों के माध्यम से संचालित होता है। इन केन्द्रों पर शिशुओं एवं गर्भवती माताओं को टीके लगवाने तथा स्वास्थ्य की जांच करने का काम भी अनौपचारिक शिक्षा के साथ-साथ किया जाता है। यहाँ भी ग्रामीण जन-चेतना के अभाव एवं अज्ञानतावश पोषाहार सेवाओं का पूरा लाभ नहीं मिल पाता। इसी कारण पोषाहार में घपले की बातें यदा-कदा सुनने में आती हैं।

संसाधनों का अभाव एक और महत्वपूर्ण कारण है। आज भी सभी गांवों में प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र की सेवाएं सुलभ नहीं हैं। उपचार हेतु जांच कराने की सुविधा वाले उपकरणों का भी अभाव बना रहता है। समुचित औषधियां और शैय्याओं की कमी भी बराबर बनी रहती है। यहाँ नियुक्त चिकित्सक अपनी नियुक्ति को सजा मानकर चलते हैं। कुछ ही चिकित्सक मिलेंगे जो गांवों में सेवा की भावना से काम करते हैं। चिकित्सक प्रायः किसी न किसी कारण से अपने मुख्यालय से बाहर जाने का प्रयास करते हैं। अपना अधिक समय व्यक्तिगत रोगियों को देखने में लगाते हैं। स्टाफ के अन्य कर्मचारी भी अधिकांश समय इधर-उधर पूरा करते नजर आते हैं। ऐसे में निर्धन रोगी अपना उपचार कराने में अपने को लाचार पाता है।

यातायात के रास्तों का कच्चा होना एवं आवागमन सुविधाओं के अभाव में अनेक रोगी चिकित्सालय पहुंचने से पहले दम तोड़ देते हैं। बैलगाड़ियों में ही प्रसव तक होने की घटना हुई है। गांवों में परंपरावादी विचार भी बाधक बनते हैं।

राजस्थान में प्रयास

राजस्थान में चिकित्सा एवं स्वास्थ्य के क्षेत्र में अपने साधनों में एवं अन्य संस्थाओं के सहयोग से जो प्रयास किये गये हैं वह अपने आप में उल्लेखनीय हैं । राज्य में आजादी के बाद चिकित्सा इकाइयों में वृद्धि हो गई है । रोगी शैय्याएं भी बढ़ी हैं । ग्रामीण इलाकों में स्वास्थ्य केन्द्र एवं उप केन्द्र कार्य कर रहे हैं । प्लेग, हैजा, मलेरिया और तपेदिक रोगों से होने वाली मृत्यु पर नियंत्रण है । चेचक उन्मूलन हो गया है । वर्ष 1981 में मृत्युदर 14.6 प्रतिशत थी, जो घट कर 1989 में 10.3% हो गई है । ग्रामीण परिवार कल्याण कार्यक्रम अपनाने के लिए आगे आए हैं ।

राजस्थान सरकार अपने बजट का 62 प्रतिशत हिस्सा गांवों एवं ग्रामीणों के विकास के लिए व्यय कर रही हैं । चालू वित्तीय वर्ष में चिकित्सा एवं स्वास्थ्य सेवाओं के मद पर पर्याप्त धनराशि व्यय करने का प्रावधान रखा गया है । गत एक वर्ष में चिकित्सा भवनों के निर्माण के लिए 23 करोड़ रुपये उपलब्ध कराए गए । इतनी बड़ी धनराशि इतने कम समय में पहले कभी उपलब्ध नहीं कराई गई ।

अचानक निरीक्षण

राजस्थान के चिकित्सा एवं स्वास्थ्य मंत्री ने राज्य में चिकित्सा सुविधाओं एवं चिकित्सा सेवाओं को बेहतर बनाने के लिए अनेक उपाय किये हैं । इनमें स्वास्थ्य केन्द्रों की अचानक जांच वह स्वयं कभी-कभी करते हैं । आज प्रत्येक चिकित्सा इकाई पर चिकित्सक एवं स्टाफ को यह चिंता रहती है कि पता नहीं कब चिकित्सा मंत्री का आगमन हो जाये । वे पूरे समय औषधालय पर रहने का प्रयास करते हैं । टीकाकरण एवं परिवार कल्याण के अपने लक्ष्यों को प्राप्त करने का भी प्रयास करते हैं अचानक जांच के समय इनकी प्रगति भी जानी जाती है ।

ग्रामीण स्वास्थ्य के लिए चिंता

चिकित्सा एवं स्वास्थ्य मंत्री की मान्यता है कि ग्रामीण एवं निर्धन व्यक्ति को भी स्वास्थ्य सेवाएं पहुंचाना सरकार की प्राथमिकताओं में एक है । चिकित्सा विज्ञान की नई खोजों, विशेषतया उपकरण सुविधा का लाभ लेने में ग्रामीणजनों का हक पहले बनता है । इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए गांवों में खाली चिकित्सकों के पदों को प्राथमिकता से भरा गया । चिकित्सकों में सेवा भावना जागृत करने की दृष्टि से उन्हें गांवों तक भेजा गया । नागरिकों का आह्वान किया कि वे गांवों में चिकित्सा विकास समिति बना कर स्वास्थ्य सेवाओं को बेहतर बनाने के लिए सरकार का सहयोग करें ।

वास्तव में ग्रामीण इलाकों में चिकित्सा व्यवस्थाओं को ठीक रखने, चिकित्सक एवं स्टाफ को ड्यूटी पर रहने, सरकारी दवाइयों के वितरण को कारगर बनाने, चिकित्सालय परिसर में शुद्ध वातावरण बनाये रखने आदि में ग्रामीण स्तर पर बनी चिकित्सा विकास समिति अत्यंत कारगर भूमिका निभा सकती है ।

गांवों में अधिक चिकित्सा इकाइयों के विस्तार के लिए भी प्रयास किया गया है । प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों को अधिक संसाधन उपलब्ध करा कर सुदृढ़ बनाया गया है ।

अधिक आर्थिक संसाधन जुटाने के प्रयास

चिकित्सा एवं स्वास्थ्य मंत्री ने राज्य में चिकित्सा एवं स्वास्थ्य सेवाओं को अधिक कारगर एवं उपयोगी बनाने के लिए अधिक आर्थिक संसाधन जुटाने के प्रयासों की दिशा में नई पहल की है। इसके लिए प्रवासी राजस्थानियों के माध्यम से प्रयास कर 10 करोड़ रुपये संग्रहित करने का लक्ष्य लेकर मुख्यमंत्री चिकित्सा सहायता कोष का गठन किया । इसमें प्रवासी राजस्थानियों को स्वेच्छा से राशि दान देने का प्रावधान कर उन्हें प्रेरित किया गया ।

स्वयंसेवी संस्थाओं की पहल

राजस्थान में चिकित्सा सेवाएं विशेष कर टीकाकरण एवं स्वास्थ्य परीक्षण की दिशा में स्वयंसेवी संस्थाएं आगे आई हैं । रोटरी क्लब, लायन्स क्लब एवं कई अन्य संस्थाएं साप्ताहिक एवं पाक्षिक शिविर शहर की पिछड़ी बस्तियों एवं गांवों में आयोजित करती हैं । चिकित्सक इन स्वास्थ्य शिविरों में अपनी निशुल्क सेवाएं उपलब्ध कराते हैं । इनका लाभ यह भी होता है कि कैंसर जैसे रोगी की प्राथमिक अवस्था में पहचान होने से उपचार संभव होता है ।

कोटा जिले में चिकित्सा सेवा समिति श्री रिछपाल पारीख के नेतृत्व में चिकित्सा क्षेत्र में अपनी पहचान बना चुकी है । गरीब जरुरतमंद के लिए रक्त की व्यवस्था करना, विकलांगता प्रमाणपत्र शिविर, कोढ़ियों की सेवा आदि के महत्वपूर्ण सेवा कार्यों के साथ-साथ नशा मुक्ति शिविरों का आयोजन कर स्वास्थ्य रक्षा की दिशा में महती कार्य किया है ।

निजी उद्योग प्रतिष्ठान एवं स्वयं सेवी संस्थाएं परिवार कल्याण शिविर आयोजन में भी आगे आये हैं। परिवार कल्याण कार्यक्रम में सघन परिवार कल्याण शिविर लगाये जाते हैं।

आंगनबाड़ी केन्द्रों में प्रयास

पांचवीं पंचवर्षीय योजना में एकीकृत ग्राम बाल विकास कार्यक्रम आरंभ किया। यह वर्तमान में राज्य के 9 जिलों में लागू है। आगामी दो वर्षों में राज्य के सभी 237 विकास खंडों में लागू करने के प्रयास किये जा रहे हैं।

आंगनबाड़ी केन्द्रों के माध्यम से पौष्टिक आहार कुपोषित बच्चों को उपलब्ध करा कर स्वास्थ्य रक्षा के प्रयास किये जाते हैं। बीमारियों से प्रतिरक्षण हेतु टीके लगवाये जाते हैं। सायं के समय महिला मंडलों में महिलाएं परिवार कल्याण की जरुरत एवं टीकाकरण अपनाने के मुद्दों पर चर्चा करती हैं।

अनेक जगहों पर आंगनबाड़ी कार्यकर्ता काफी उत्साह से काम कर रही हैं। बीरा जिले के छबड़ा में संचालित बाल विकास परियोजना अत्यंत सफलतापूर्वक स्वास्थ्य रक्षा के लिए काम कर रही है। महिला मंडलों ने महिला चेतना जागृति के अनुकरणीय प्रयास किये हैं।

मातृ शिशु एवं कल्याण सेवाएं

राजस्थान में यद्यपि शिशु मृत्यु दर में कमी आई है फिर भी देश के अन्य राज्यों की तुलना में अभी भी एक चुनौती है। यही स्थिति प्रसव के समय महिलाओं की मृत्यु की भी है। राज्य के ग्रामीण इलाकों में शिशुओं एवं महिलाओं की स्वास्थ्य संबंधी जरुरतें उपकेन्द्रों, प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों, मातृ एवं शिशु कल्याण केन्द्रों, सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्रों, रेफ़रल अस्पतालों एवं प्रसवोत्तर कार्यक्रमों के माध्यम से पूरी की जाती है।

राज्य में अनुमानतः 8,000 उपकेन्द्र कार्यरत हैं। इनकी स्थापना का मुख्य उद्देश्य शिशु एवं महिलाओं की स्वास्थ्य रक्षा करना है। उद्देश्य पूर्ति हेतु प्रत्येक उपकेन्द्रों पर एक महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता का पद स्वीकृत किया गया है। इनका मुख्य कार्य गर्भवती महिलाओं के स्वास्थ्य की प्रसव से पूर्व एवं पश्चात जांच करना, सुरक्षित प्रसव कराना है। टीके लगाना एवं रोगी का प्राथमिक उपचार करना है। स्वास्थ्य शिक्षा का प्रसार कर अंध विश्वासों को दूर करना भी इनका दायित्व है।

चिकित्सा एवं स्वास्थ्य मंत्री श्री ललित किशोर चतुर्वेदी ने बताया कि ग्रामीण क्षेत्रों में चिकित्सा सुविधाओं के विस्तार के लिए दीर्घकालीन नीति भी बनाई गई है। प्रत्येक पंचायत समिति में आगामी दो वर्षों में एक रेफ़रल अस्पताल खोला जायेगा। अब तक 236 पंचायत समितियों में से 199 में रैफरल अस्पताल खोले गये हैं।

पंचवर्षीय दीर्घकालीन योजना में 30 हजार की आबादी पर एक प्राथमिक केन्द्र और 10 वर्षीय दीर्घकालीन योजना में पांच हजार की आबादी पर एक उप स्वास्थ्य केन्द्र खोलने की योजना है।

ग्रामीण सेवाओं को और अधिक प्रभावी बनाने के लिए बेहतर देखभाल एवं संचालन की दृष्टि से मुख्य चिकित्सा एवं स्वास्थ्य अधिकारी के पद अलग से सृजित किये गये हैं। सभी पदों पर नियुक्ति कर दी गई है।

सातवीं योजना के अंत तक 31 मार्च 90 तक राज्य में 1048 प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र, 186 रेफ़रल चिकित्सालय ग्रामीण क्षेत्रों में खोले गये। प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र सामान्य क्षेत्रों में 30,000 तथा जनजाति एवं रेगिस्तानी क्षेत्रों में 20,000 की जनसंख्या पर उपलब्ध कराए जाते हैं। सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र (रेफ़रल अस्पताल) ग्रामीण क्षेत्रों में अत्यंत महत्वपूर्ण होते हैं। यहाँ विशेषज्ञ एक्स रे, ई.सी.जी., लेबोरेटरी, आपरेशन एवं रोगी वाहन की सुविधाएं उपलब्ध रहती हैं। यहाँ कम से कम 30 रोगी शैय्याएं उपलब्ध रहती हैं। यह अस्पताल लगभग एक लाख ग्रामीण जनसंख्या के स्वास्थ्य की रक्षा करता है।

ऐसे ग्रामीण क्षेत्रों में जहाँ आबादी प्रति गांव एक हजार से कम है और वहाँ टीकाकरण की नियमित सेवाएं उपलब्ध नहीं हैं, तथा ऐसे क्षेत्र जहाँ जुलाई, 90 तक 20 प्रतिशत से भी कम टीकाकरण हुआ है, ऐसे गांवों/क्षेत्रों के लिए अक्तूबर, 90 से तीन माह के लिए सघन टीकाकरण का विशेष कार्यक्रम चलाया गया। प्राथकिता के आधार पर इस अभियान हेतु राज्य के 15 जिलों की 60 समेकित बाल विकास परियोजनाओं के 4961 गांवों तथा ग्रामीण क्षेत्र में महिला विकास कार्यक्रम (डवकारा) के 413 समूहों के 270 गांवों तथा जोधपुर, जयपुर एवं अलवर के शहरी बाल विकास परियोजना क्षेत्रों का चयन किया गया। जन चेतना जागृति भी इस अभियान का प्रमुख बिन्दु रहा।

जनचेतना के लिए अभिनव प्रयोग

स्वास्थ्य के प्रति जन चेतना जागृति के लिए 1 जून 91 से राज्य के बूंदी, टोंक, नागौर और सिरोही जिलों में 'स्वास्थ्य

मित्र योजना' शुरु की है । नागरिकों को स्वास्थ्य के प्रति सजग करना, रोगों से बचाव की नवीनतम जानकारी देना और स्वास्थ्य सेवाओं के प्रति विश्वास बनाना इस कार्यक्रम के मुख्य लक्ष्य रखे गये । इसकी सफलता पर इसे राज्य के अन्य जिलों में भी लागू किये जाने का विचार है ।

यू०एन०एफ०पी०ए० परियोजना दूसरा चरण : (1989-93)

परिवार कल्याण कार्यक्रमों को अधिक गतिशील बनाने के लिए यूनाइटेड नेशन्स फण्ड फार पापुलेशन एक्टीविटी परियोजना का प्रथम चरण वर्ष 1980 में भरतपुर, धौलपुर, सवाई माधोपुर एवं कोटा जिलों में आरंभ किया गया । यह चरण 1986 तक चला, जिसमें 11.80 करोड़ रुपया व्यय किया गया । इस चरण में ग्रामीण क्षेत्रों में चिकित्सा सेवा संस्थाओं के लिए भवन, फर्नीचर उपकरण आदि जुटा कर प्रशिक्षण के माध्यम से चिकित्सा कर्मियों की कार्य कुशलता बढ़ाना था । इस चरण में 2452 दाइयों, 3574 ग्रामीण स्वास्थ्य दर्शिका तथा अन्य स्टाफ को प्रशिक्षण दिलाया । भवन निर्माण में 278 स्वास्थ्य उपकेन्द्रों एवं 166 महिला स्वास्थ्य दर्शिका 'आवास गृहों का निर्माण कराया गया ।

प्रथम चरण की आशाजनक उपलब्धियों एवं राजस्थान की परिस्थितियों को देख कर 19.77 करोड़ रुपये का प्रावधान कर राज्य के 17 जिलों में दूसरा चरण 1989 में पांच वर्ष के लिए प्रारंभ किया गया, जो 1993 तक चलेगा । इस राशि में 10 प्रतिशत योगदान राज्य सरकार कर रही है ।

राजस्थान के ग्रामीण क्षेत्रों में स्वास्थ्य सेवाएं जन-जन तक पहुंचाने, चिकित्सा भवनों का विस्तार, चिकित्सकों की नियुक्तियाँ चिकित्सा कर्मियों के कार्य कौशल में वृद्धि, स्वास्थ्य संस्थाओं को सुदृढ़ करना, स्वास्थ्य के प्रति जनजागृति के प्रयास जो आजादी के बाद किये गये वह राजस्थान जैसे पिछड़े राज्य के लिए एक कीर्तिमान ही कहा जा सकता है परन्तु जनसंख्या वृद्धि से प्रयास बौने नजर आते हैं । परिवार कल्याण पूरी जिम्मेदारी से लागू करने पर भी वांछित परिणाम नजर नहीं आते हैं । गत 40 वर्षों में (1950-91) राज्य की आबादी 1 करोड़ 60 लाख से बढ़कर 4 करोड़ 90 लाख के आसपास हो गई । स्वास्थ्य सेवाओं का कारगर तरीके से लाभ लेने के लिए जनसंख्या नियंत्रण जरुरी है । इसके लिए नागरिकों को स्वयं अपना उत्तरदायित्व समझना होगा ।

सूचना एवं जनसम्पर्क अधिकारी,
सूचना केन्द्र
कोटा- 324001 (राजस्थान)

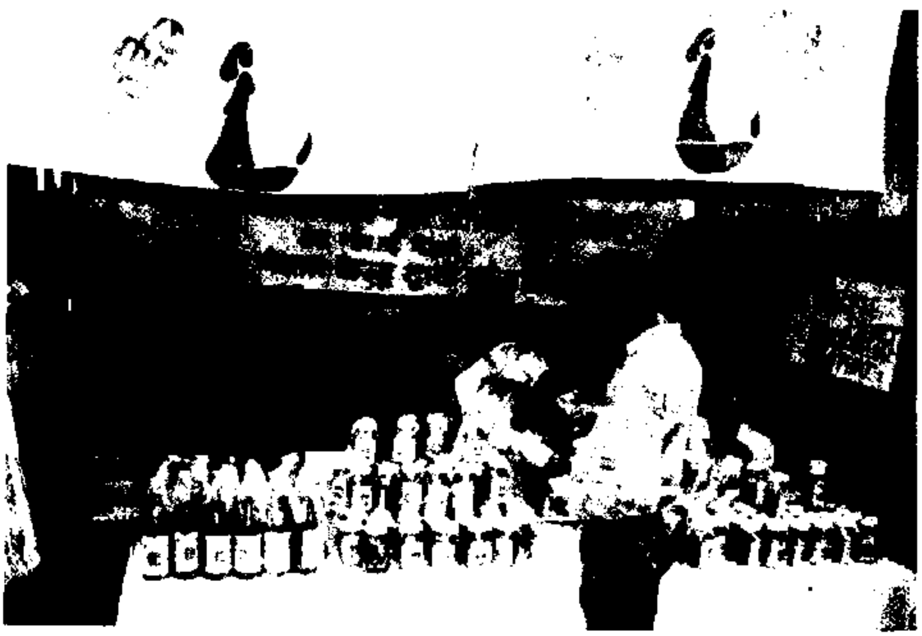

ग्रामीण विकास और जवाहर रोजगार योजना

डॉ० पारसनाथ सिंह
कृष्ण कुमार सिंह

भारत गांवों में बसा है । गांवों की सबसे गंभीर एवं जटिल समस्या गरीबी एवं बेरोजगारी ही है । आजादी के बाद ही गांवों के विकास के क्रम में सबसे गरीब एवं कमजोर तबके के लोगों के जीवन-स्तर को ऊपर उठाने का प्रयास चल रहा है, इसके बावजूद 40 प्रतिशत ग्रामीण जनसंख्या गरीबी रेखा के नीचे है अर्थात् इनकी वार्षिक आय सातवीं पंचवर्षीय योजना के अनुसार 6400 रुपये से कम है । सातवीं पंचवर्षीय योजना में यह भी स्वीकार किया गया है कि तीव्र गति से औद्योगिक विकास के बावजूद अतिरिक्त ग्रामीण जनसंख्या को संगठित औद्योगिक क्षेत्र में रोजगार उपलब्ध नहीं कराया जा सकता । अतः गहन कृषि, ग्रामीण उद्योगों के विस्तारीकरण एवं अन्य ग्रामीण आर्थिक क्रियाओं एवं पूंजी निर्माण सम्बन्धी योजनाओं के माध्यम से अतिरिक्त रोजगार का निर्माण करना होगा ।

ग्रामीण क्षेत्रों में बेरोजगारी अपने आप में गरीबी एवं पिछड़ेपन का एक मूल कारण है । इसकी गुरुता प्रदूषण का रूप धारण करती जा रही है । फलस्वरूप ग्रामीण क्षेत्रों का आर्थिक एवं सामाजिक पर्यावरण असंतुलित होता जा रहा है और विकास के आयाम बढ़ते जा रहे हैं । चौथी पंचवर्षीय योजना में ग्रामीण क्षेत्रों में गरीब लोगों को रोजगार दिलाने हेतु श्रम प्रधान कार्यक्रम यथा, लघु सिंचाई, भूरक्षण एवं रोजगारोन्मुख विशिष्ट कार्यक्रमों को लागू किया गया था । पांचवीं पंचवर्षीय योजना में उत्पादक रोजगार के अवसरों के विस्तार को योजना के उद्देश्यों में सम्मिलित करते हुए यह स्वीकार किया गया कि देश श्रम शक्ति विस्फोट काल में प्रवेश कर गया है । त्वरित विकास और असमानता को कम करने के लिए उत्पादक रोजगार के अवसरों का विस्तार महत्वपूर्ण है । रोजगार ही एक ऐसा विश्वसनीय उपाय है जिसके द्वारा निर्धनता के नीचे रहने वाली आबादी को ऊपर उठाया जा सकता है । इसी दृष्टिकोण से इस योजना में लघु कृषक विकास एजेन्सी, सूखाग्रस्त क्षेत्रों की परियोजनाओं एवं ग्रामीण रोजगार के अन्य विशिष्ट कार्यक्रमों पर बल दिया गया ।

छठी पंचवर्षीय योजना में भी सामाजिक न्याय के उद्देश्य से गरीबी उन्मूलन एवं रोजगार कार्यक्रमों के समन्वय का प्रयास किया गया । योजना के प्रारूप में स्पष्ट रूप से कहा गया कि कृषि और उद्योग दोनों का एक साथ समन्वय कर विकास किया जायेगा जिससे विनियोग, उत्पादन और रोजगार में तीव्र गति से विकास का प्रारूप तैयार हो सकेगा । इस योजना में राष्ट्रीय रोजगार कार्यक्रम को एक साथ इसलिए लागू किया गया कि निर्धनता उन्मूलन और रोजगार कार्यक्रम के बीच समन्वय स्थापित हो सके । ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारन्टी कार्यक्रम एवं स्वरोजगार योजना को संचालित कर इस योजना में 360 मानक मानव दिन रोजगार पैदा करने का निश्चय किया गया ।

सातवीं पंचवर्षीय योजना ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार वृद्धि के उद्देश्य से राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम, समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम, ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारन्टी कार्यक्रम एवं ट्राइसेम जैसे कल्याणकारी कार्यक्रमों को और अधिक तत्परता के साथ लागू किया गया । योजना के अनुरूप 1985-86 एवं 1986-87 में क्रमशः 230 करोड़ एवं 443 करोड़ रुपये परिव्यय के लिए आवंटित किये गये । ग्रामीण भूमिहीन रोजगार प्रत्याभूत योजना पर उक्त वर्षों में क्रमशः 400 करोड़ और 633 करोड़ रुपये व्यय करने का निश्चय किया गया । सातवीं योजना के ही अंतिम वर्ष में 1989-90 में जवाहर रोजगार योजना प्रारम्भ की गयी ।

जवाहर रोजगार योजना अप्रैल 1989 में ग्रामीण बेरोजगारी पर सीधा प्रहार कर गरीबों के जीवन-स्तर में आवश्यक सुधार के लिए घोषित की गयी । यह कोई नयी योजना नहीं है बल्कि केन्द्र द्वारा पहले से चालित राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम (एन.आर.ई.पी.) और ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारंटी कार्यक्रम (आर.एल.ई.जी.पी.) को मिलाकर उनके स्थान पर यह नयी योजना दी गयी है जो पूरे देश में 1.4.1989 से नये उत्साह, नयी आशा के साथ लागू की गयी । इस योजना के मुख्य उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबी रेखा के नीचे रह रहे बेरोजगार लोगों के लिए अतिरिक्त रोजगार का सृजन करना, ग्रामीण क्षेत्र में रहने वाले गरीब लोगों की आय में वृद्धि करने के उद्देश्य से आर्थिक और सामाजिक आधारभूत सुविधाओं का सृजन करना एवं इनके फलस्वरूप ग्रामीण जीवन का गुणात्मक विकास करना है । इस योजना में यह भी स्पष्ट किया गया है कि रोजगार देने में अनुसूचित जाति और अनुसूचित जन जाति के लोगों को प्राथमिकता दी जायेगी । नियोजन में महिलाओं की संख्या कम से कम 30 प्रतिशत होगी । साथ ही ऐसी व्यवस्था भी करनी है कि गरीबी रेखा के नीचे जीने वाले हर परिवार में कम से कम एक व्यक्ति को नियोजन मिल

सके। रोजगार के अवसर पैदा करने के साथ-साथ निर्धन समूह को प्रत्यक्ष एवं नियमित लाभ देने के उद्देश्य से सामुदायिक परिसम्पत्तियों का निर्माण भी करना है जिसके फलस्वरूप ग्रामीणों का आर्थिक और सामाजिक आधारभूत ढांचा मजबूत हो सके और उसके बल पर ग्रामीण अर्थव्यवस्था का तेजी से विकास हो सके और गरीबों की आय में वृद्धि हो सके। इस योजना को कार्यान्वित करने के लिए 2100 करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया। यहां ध्यान देने योग्य बात यह है कि इतनी बड़ी रकम कोई भी सरकार ने ग्राम पंचायतों को अभी तक नहीं दी थी। इस योजना पर होने वाले कुल व्यय का 80 प्रतिशत केन्द्र सरकार और 20 प्रतिशत राज्य सरकार वहन करेगी।

इस योजना के अंतर्गत ग्राम विकास के लिए पंचायतों द्वारा वार्षिक योजना बनायी जायेगी। जो परियोजना उस वार्षिक योजना में शामिल रहेगी, उन्हीं का कार्यान्यवन उस वर्ष में किया जायेगा। योजना का उद्देश्य गांवों का आर्थिक विकास और ग्रामीण जीवन को सुखी और सुन्दर बनाना है। यदि पंचायत अपने क्षेत्र के लिए विकास की दीर्घकालीन योजना बना ले तो उसके आधार पर वार्षिक योजना बनाने में सुविधा होगी। स्पष्ट है कि पंचायत के स्तर पर बड़ी एवं मध्यम योजनाएं जिनमें बड़ी और बड़ी तकनीकी दक्षता की आवश्यकता होगी, नहीं ली जा सकती है। पंचायत स्तर पर तो सिर्फ कृषि, घरेलू उद्योग, सिंचाई, विद्यालय एवं औषधालय भवन आदि से सम्बन्धित छोटी-छोटी योजनाएं ही ली जा सकती हैं। पंचायत स्तर पर उपलब्ध सूचनाएं एवं आंकड़े ही दीर्घकालीन योजना का आधार होगा।

जवाहर रोजगार योजना के क्रियान्वयन का दायित्व ग्राम पंचायतों का होगा और सरकारी पदाधिकारी उसका निरीक्षण करेंगे तत्पचात् प्रतिवेदन प्रस्तुत करेंगे। जिन ग्राम पंचायतों की जनसंख्या 3000 से 4000 तक होगी उन्हें प्रतिवर्ष 80 हजार रुपये से 1 लाख रुपये तक योजनाओं के कार्यान्वियन के लिए दिया जायेगा। पहले की रोजगार योजनाएं सिर्फ 55 प्रतिशत ग्राम पंचायतों में लागू थीं लेकिन यह योजना देश भर की सभी ग्राम पंचायतों में लागू की गई।

इस योजना के लिए केन्द्र द्वारा राज्यों को धनराशि का आवंटन वहां के निवासियों की निर्धनता एवं गरीबी की सघनता के आधार पर किया जायेगा। पुनः राज्यों द्वारा जिलों को धनराशि का आवंटन क्षेत्र के पिछड़ेपन के आधार पर किया जायेगा। अर्थात् जो जिला अधिक पिछड़ा होगा उसे अधिक धनराशि उपलब्ध करायी जायेगी। इसके लिये मुख्य तीन आधार होंगे :–

(अ) जिले के कुल जनसंख्या के अनुसूचित जाति, अनुसूचित जन जाति की जनसंख्या का अनुपात।

(ब) कुल मजदूरों की जनसंख्या में कृषि मजदूरों की जनसंख्या का अनुपात।

(स) कृषि उत्पादकता का स्तर।

जो धनराशि ग्राम पंचायतों को प्राप्त होगी उसका 6.25 प्रतिशत इंदिरा आवास पर व्यय होगा। यह खर्च जिला ग्रामीण विकास अभिकरण के द्वारा किया जायेगा। इंदिरा आवास के सम्बन्ध में जो निर्देश पहले से दिये गये हैं उसके अनुरूप ही कार्य होगा। इसके बाद जिला अभिकरण से पंचायत को जो राशि प्राप्त होगी, उसका व्यय निम्न तरह से किया जायेगा :–

(1) प्रशासनिक कार्यों के लिए - 5 प्रतिशत
(2) सम्पदाओं के रख-रखाव के लिए एन.आर.ई.पी., आर. एल.ई.जी.पी. के अंतर्गत अब तक सृजित योजना - 10 प्रतिशत
(3) अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति से सम्बन्धित योजनाओं के लिए - 12.75 प्रतिशत
(4) कृषि उत्पादन वृद्धि परियोजनाओं के लिए - 29.75 प्रतिशत
(5) वानिकी परियोजना के लिए - 21.25 प्रतिशत
(6) सड़क एवं भवन पर व्यय के लिए - 21.25 प्रतिशत

जो परियोजनाएं दो पंचायतों से सम्बन्धित होंगी उन्हें दोनों पंचायत मिलकर पूरी करेंगी। परियोजनाओं का काम इस गति से होना चाहिए कि वे समय पर अनुमानित लागत के अन्तर्गत पूरा हो जाय। सामान्यतः ऐसी ही परियोजनाएं ली जानी चाहिए जो एक साल के अन्दर पूरी की जा सकें। तकनीक या किसी अन्य कारण से यदि पूरी न हो सके तो दूसरे साल अवश्य पूरी हो जानी चाहिए।

ग्राम पंचायत परियोजनाओं की उपादेयता पर पूर्णतः विचार करके उनका चयन करती है। ऐसी ही परियोजनाएं ली जाती हैं जो गांव के विकास में सहायक होती हैं। जिनसे अधिकाधिक लोगों को रोजगार मिलता है। इसके अंतर्गत परियोजनाओं का चयन पंचायतों की कार्यपालिका समिति द्वारा होगा। पंचायत के द्वारा किया गया चयन निर्णायक और अंतिम होगा। किसी भी स्तर पर इसके द्वारा स्वीकृत परियोजनाओं के जगह पर दूसरी परियोजनाएं नहीं जोड़ी जायेगी। इसके लिए कार्यपालिका समिति द्वारा वार्षिक योजना बना ली जायेगी और उस पर

पंचायत की आम सभा की स्वीकृति ली जायेगी । आम सभा की स्वीकृति के बाद तकनीकी स्वीकृति लेनी पड़ती है, जिसके लिए परियोजनाएं प्रखण्ड विकास पदाधिकारी के पास भेज दी जाती हैं । सामान्यतः पंचायतों से परियोजनाओं की मोटी रूप-रेखा ही आती है । अतः प्रखण्ड विकास पदाधिकारी अभियन्ताओं से उनका प्रक्कलन बनवाकर कनिष्ठ अभियन्ता/सहायक अभियन्ता/कार्यपालक अभियन्ता से उनकी तकनीकी जांच करा लेते हैं । वैसी ही परियोजनाएं ली जाती हैं जो तकनीकी दृष्टि से ठीक हो । कनिष्ठ अभियन्ता 10 हजार रुपये, सहायक अभियन्ता 1 लाख रुपये और कार्यपालक अभियन्ता 5 लाख रुपये तक की परियोजनाओं को तकनीकी स्वीकृति देने के लिए सक्षम है । तकनीकी जांच में ठीक पाये जाने पर प्रखण्ड विकास पदाधिकारी ध्यान देते हैं कि परियोजना पंचायत की वार्षिक योजना में सम्मिलित हो, पूरे वर्ष में मिलने वाली राशि की 25 प्रतिशत से अधिक परियोजना नहीं है, अनुसूचित जाति, अनुसूचित जन जाति के लिए निर्धारित राशि का उपयोग उनसे सम्बन्धित परियोजनाओं पर हो रहा है और पंचायत स्तर पर विभिन्न परियोजनाओं में होने वाले खर्च का 50 प्रतिशत मजदूरी पर खर्च हो रहा है । यदि परियोजना उपर्युक्त शर्तों के अनुरूप होती है तो प्रखण्ड विकास पदाधिकारी उन्हें कार्यान्वयन के लिए पंचायत को वापस भेज देते हैं । यदि उनके अनुरूप नहीं है तो पुनर्विचार के लिए पंचायत को भेज दी जाती हैं ताकि पंचायत इस में आवश्यक सुधार कर सके । सबकी जानकारी के लिए पंचायत के अंतर्गत ली गयी परियोजनाओं की सूची लागत सहित एवं उसके लिए मिली धनराशि को एक पट्टी पर लिख कर सर्व साधारण को सूचित कर दिया जाता है ।

जवाहर रोजगार योजना के अंतर्गत सबसे अहम् बात यह है कि कोई भी काम ठेका पर नहीं कराया जायेगा । कोई भी सरकारी कर्मचारी, मुखिया या कार्यकारिणी का कोई सदस्य पंचायत के नाम से या और किसी प्रकार प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से अभिकर्ता का काम नहीं करेंगे अर्थात् कोई भी व्यक्ति अपने व्यक्तिगत हैसियत से अभिकर्ता नहीं होगा परन्तु अनुसूचित जाति/जनजाति के सदस्य जिन्हें लाभ के लिए कोई परियोजना दी गयी हो, वे इसके अभिकर्ता के रूप में काम कर सकते हैं ।

इस योजना के सभी काम स्थानीय श्रमिकों या लाभान्वितों की समिति के द्वारा होगा । स्वयंसेवी संस्थाओं को भी अभिकर्ता बनाया जा सकता है । अभिकर्ता का चयन पंचायत की कार्यपालिका समिति के द्वारा होगा और उस पर आम सभा की स्वीकृति लेनी होगी । श्रमिकों, लाभान्वितों की समिति के सचिव, उस समिति के सदस्यों में से ही उनके द्वारा चुने हुए एक व्यक्ति होंगे । यदि पंचायत उस परियोजना को सरकार के किसी विभाग से कराना श्रेयस्कर समझती है तो अनुरोध करके उस विभाग को सौंप सकती है । ऐसी स्थिति में उस पर होने वाले व्यय की राशि उस विभाग को दे दी जायेगी ।

ग्राम पंचायत की आम सभा की बैठक प्रति तिमाही बुलानी होगी और आवश्यकता होने पर अधिक बैठकें भी बुलायी जा सकती हैं । आम सभा में दीर्घकालीन/वार्षिक योजनओं की स्वीकृति, अभिकर्ता की चयन की स्वीकृति दी जाती है । परियोजनाओं की प्रगति पर विचार होता है और कार्यान्वियन समिति के सदस्यों का चुनाव होता है । इस सभा में योजना के अंतर्गत होने वाले सभी खर्चों का विचार के लिए ब्यौरा रखा जाता है । इसी तरह सृजित परिसम्पत्तियों के रख-रखाव और उन पर पड़ने वाले व्ययों की सूचना—आम सभा को दी जाती है । ग्राम पंचायत के मुखिया यह सुनिश्चित करेंगे कि कार्यपालिका समिति/आम सभा की बैठक नियमित रूप से हो । आम सभा की बैठक की व्यापक सूचना गांव के लोगों को दी जानी चाहिए ताकि सबको इसकी जानकारी हो सके । आम सभा की बैठक की सूचना प्रखण्ड विकास पदाधिकारी, अनुमण्डलाधिकारी, जिला पंचायत पदाधिकारी और उपविकास आयुक्त को भेजी जानी चाहिए । आम सभा में सरकारी पदाधिकारियों का उपस्थित रहना आवश्यक है । यदि ऐसा नहीं हुआ तो पंचायत पर्यवेक्षक उपस्थित होकर निर्णयों की जानकारी प्रखण्ड विकास पदाधिकारी को देते हैं ।

पंचायत कार्यपालिका समिति के अतिरिक्त काम की देख-रेख के लिए आम समिति/एक कार्यान्वयन समिति का भी गठन करती है । इस समिति में पांच से सात सदस्य होते हैं जिनमें कम से कम एक अनुसूचित जाति/जनजाति का सदस्य और एक महिला होगी । गांव के तकनीकी या प्रशासनिक अनुभव प्राप्त व्यक्ति को इसका सदस्य बनाया जाना चाहिए । परियोजनाओं के लिए स्थानीय-स्तर पर ही सामग्रियां उपलब्ध करायी गयी हैं । सीमेंट, लोहा इत्यादि जैसी सामग्रियों के लिए जिला विकास प्रखण्ड की सहायता ली जाती है ।

ऊपर के योजना सम्बन्धी विश्लेषण से स्पष्ट है कि इस योजना के द्वारा पहली बार ग्राम पंचायतों को अपने परियोजनाओं के क्रियान्वयन के लिए मोटी रकम उपलब्ध करायी गयी । इससे सीधा ग्रामवासियों को योजना के क्रियान्वयन में भागीदार बनने का अवसर प्राप्त हुआ । योजना के सम्पादन में भागीदारी होने से इनके कंधे पर उत्तरदायित्व का बड़ा बोझ आ गया तथा ये अपने अधिकारों एवं कर्तव्यों के प्रति सजग हो गये एवं पहले से व्याप्त प्रशासनिक व्यय और क्रियान्वयन लागत में भी कमी

आयी। इस योजना की एक महत्वपूर्ण विशिष्टता यह है कि यह ग्राम पंचायत की बैठक द्वारा आम सभा द्वारा ही तय होता है कि गांव की किस नाली को पहले बनाया जाय। इससे होता यह है कि ग्राम पंचायत में प्रायः हर व्यक्ति को यह भलीभांति जानकारी मिल जाती है कि योजना के क्रियान्वयन के लिए कितनी रकम उपलब्ध है और किन-किन परियोजनाओं पर इस प्राप्त रकम का व्यय किया जायेगा। रोजगार में संलग्न व्यक्ति को मालूम होगा कि उसके और दूसरों के पारिश्रमिक में कोई भिन्नता तो नहीं है तथा किस व्यक्ति को कितने दिन काम दिया गया है यानि यह लोगों को मालूम होगा कि किसी का शोषण तो नहीं हो रहा है। नियमों के अनुसार तो उन्हें यह अस्त्र भी दिया गया है, जिससे मुखिया, सरपंच जो शोषण करना चाहता है, हटा सकता है।

भारतवर्ष में लागू की गयी अन्य परियोजनाओं की तरह यह भी आदर्शवादी अवधारणाओं पर आधारित है। यह इस मान्यता पर भी अवलम्बित है कि गांवों और पंचायतों में सब कुछ सामान्य है। लोग अमन-चैन के साथ शान्तिपूर्ण एवं आपसी सदभावपूर्ण जीवन व्यतीत कर रहे हैं जबकि वास्तविकता ठीक इसके विपरीत है। ग्राम पंचायत का चुनाव आपसी वैमनस्य, व्यक्तिगत स्वार्थ, संकीर्ण विचार और आपसी जलन एवं स्थानीय राजनीति जैसी छोटी-छोटी बातों ने पूरे ग्रामीण परिवेश को विषाक्त बना दिया है। संकुचित विचार के चलते ग्रामीण समाज कई वर्गों/दलों में बंट चुका है और प्रत्येक बात को लेकर एक-दूसरे का विरोध करता है। सर्वहित की बात को लेकर भी एक दल/वर्ग दूसरे के नेतृत्व को स्वीकार करने को तैयार नहीं है। यह स्थिति दलगत विरोध और व्यक्तिगत वैमनस्य के चलते यहां तक पहुंच गयी है कि सभी सामाजिक मूल्य मूल्यहीन हो गये हैं और मान्यताएं निरर्थक हो गयी हैं। ऐसे परिवेश में पंचायतों के माध्यम से ग्रामीण परियोजनाओं को लागू करना और उसे पूरा कराना कठिन ही नहीं असम्भव लगता है। आज गांवों की स्थिति यह है कि पंचायत की आम सभा बुलाकर उसमें परियोजनाओं को स्वीकृत कराना, अभिकर्ता के सम्बन्ध में स्वीकृति लेना टेढ़ी खीर है। पंचायत के मुखिया को हारे हुए मुखिया के अपने विरोधी दल का विरोध बार-बार सहन करना पड़ेगा। इसे विरोधी दल अपना अधिकार मानकर परियोजनाओं को स्वीकृत नहीं होने देगा या अभिकर्ता अपना व्यक्ति देना चाहेगा जिससे परियोजना पूरी न हो सके और मुखिया की प्रतिष्ठा गिरे।

यदि कई परियोजनाएं स्वीकृत होती हैं तो उनकी प्राथमिकता को लेकर भी आपसी विवाद खड़ा होगा। साक्षात्कार के क्रम में कई मुखियों ने इस तरह की कठिनाई को बताया है। व्यवहार में परियोजनाओं को पूरा करने में गांव के लोग भी कम बाधा नहीं उपस्थित करते। यथा, सड़क बनाने के लिए अपने जमीन से मिट्टी नहीं काटने देना, परियोजना के सामग्रियों को सुरक्षा प्रदान करने के बदले उसकी चोरी करना, परियोजना के लिए आवश्यक जमीन न देना, अनावश्यक मुकदमा खड़ा करके कार्य को रुकवा देना इत्यादि। इस तरह का भी उदाहरण मिलता है कि पानी के निकास के लिए बनने वाली नाली को भी लोग इसलिए रोक देते हैं कि नाली उनके दीवाल के नजदीक से नहीं बननी चाहिए।

गांवों में एक सफेदपोशों की जमात हो गयी है, जिन्हें "रूरल इलाईट्स" की संज्ञा दी जाती है। ये गांवों में इस तरह हावी हैं कि ग्राम विकास योजना, रोजगार सम्बन्धी ही क्यों न हो, यदि उसका लाभ उन्हें नहीं प्राप्त होता हो तो वे उसमें नाना तरह का अवरोध खड़ा करते हैं।

गांवों की गरीबी भी अपने आप में एक बड़ा अवरोध है। गरीबी-रोग ने गांव की एक बड़ी आबादी को इस तरह रोगी बना दिया है कि उन्हें अब हल्की-फुल्की दवा से कोई फायदा भी नहीं होता कि वे संभलकर अपने बल पर चल सकें। फलस्वरूप वे रोगी ही बने रहते हैं। इसी तरह बढ़ती हुई आबादी उन्हें और बोझिल बना देती है और अपर्याप्त साधनों को अप्राप्य बना देती है।

अशिक्षा ऐसी योजनाओं को सामान्य व्यक्तियों तक पहुंचने ही नहीं देती। आजादी के बाद से आज तक कई गरीबी उन्मूलन एवं रोजगार सम्बन्धी योजनाएं लागू की गयी, लेकिन उनकी जानकारी गांव के अशिक्षित लोगों को नहीं हो पाती। उनके लिए बनी योजना का लाभ दूसरे ही उठाते रहते हैं। इतना ही नहीं ग्राम पंचायतों के मुखिया एवं कार्यपालिका के सदस्य भी अशिक्षित हैं या इतना कम पढ़े-लिखे हैं कि इस योजना को ठीक से समझ नहीं पाते।

फलस्वरूप योजना के लिए रकम निकालने एवं भुगतान करने के लिए पूर्णतः अपने ग्राम सेवक पर आश्रित होते हैं, जिससे ग्राम सेवक उनका नाजायज फायदा उठाता है।

ग्राम-पो.-पसौर
जिला-भोजपुर (बिहार)
पिन- 802233

सामाजिक और आर्थिक ढांचे में हिमाचल प्रदेश की विकासोन्मुख पंगवाल जनजाति

अमर सिंह रणपतिया

हिमाचल प्रदेश का जिला चम्बा सन् 1947 से पूर्व एक पहाड़ी रियासत थी । स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद हिमाचल प्रदेश का गठन हुआ और इसका विलय प्रदेश के साथ एक जिले के रूप में हुआ । पांगी, जिला चम्बा की एक तहसील है, जिसके पूर्व में हिमाचल प्रदेश का जिला लाहौल स्थित है । पश्चिम में जम्मू-कश्मीर का क्षेत्र किश्वाड़ है । उत्तर में महान् हिमालय पर्वत शृंखला जसकर है जिसकी परली उपत्यका लद्दाख है । दक्षिण की ओर मध्य हिमालय की पर्वत शृंखला परिपांचाल है जिसके पूर्वी भाग को पांगीधार भी कहा जाता है जिस के इस ओर जिला चम्बा का अन्य भाग है ।

शिक्षा का प्रसार

रजवाड़ों के समय पांगी वजारत में केवल 2 या 3 प्राथमिक पाठशालाएं कार्यरत थीं । अब पांगी में एक वरिष्ठ माध्यमिक विद्यालय, पांच उच्च विद्यालय, पांच माध्यमिक स्कूल और लगभग 50 प्राथमिक पाठशालायें कार्यरत हैं । 35 से 40 विद्यार्थी चम्बा के समीप सरोल नवोदय विद्यालय में पढ़ रहे हैं । इतने ही विद्यार्थी इस समय महाविद्यालय चम्बा में शिक्षा ग्रहण कर रहे हैं । घाटी में तीन स्थानीय डाक्टर कार्यरत हैं । एक विद्यार्थी आई०ए०एस० की उपाधि ले चुका है । दो पंगवाल ए०सी०एफ के पद पर कार्यरत हैं । एक एच०ए०एस० की परीक्षा पास कर ए०एस०सी० के पद पर आसीन है । अन्य 10-12 जनजातीय लोग सहायक अभियंता के पद पर कार्य कर रहे हैं ।

सामाजिक जीवन

1600 वर्ग किमी० में बसी पंगवाल लोगों की जनसंख्या 1981 की जनगणना के अनुसार 12,256 थी जो बढ़कर 1991 में 16,000 के लगभग हो गई है । पांगीघाटी में इस समय 65 गांव और 15 ग्राम पंचायतें हैं । पंगवाल हिमाचल प्रदेश की अनुसूचित-जनजाति है जो विभिन्न वर्गों में राजपूत,, राठी, ठाकुर और आर्य, लुहार जाति से सम्बन्धित हैं ।

सांस्कृतिक व्यवस्था

पंगवाल जन-जातीय लोगों के सांस्कृतिक जीवन में देवता का मुख्य स्थान है । ये लोग शैव एवं शाक्त हैं । नाग देवता में भी इन की अपार श्रद्धा है । सबसे मुख्य मन्दिर मिधला में चामुण्डा माता का है । इसे बौद्ध और हिन्दू समान रूप से मानते हैं । पांगी के अतिरिक्त अन्य स्थानों से भी लोग पूजा हेतु आते हैं । यह मन्दिर किलाड़ से पूर्व की ओर आठ मील की दूरी पर है । इस के विषय में कई लोक कथाएं और अनुश्रुतियां हैं जिन का वर्णन करना यहां असंभव होगा । दूसरा प्रसिद्ध मन्दिर किलाड़ से पश्चिम की ओर लुज नामक स्थान पर शीतला माता का है । इस देवी माता की मान्यता भी सारी पांगीघाटी में है । तीसरा प्रसिद्ध मन्दिर विलीनवासनी भगवती का करयास नामक गांव के शिखर पर है । इस की मान्यता भी समस्त पांगी घाटी में है । चौथा प्रसिद्ध मन्दिर दैतनाग (दैत्य बाग) का है जो पांगी के मुख्यालय किवाड़ में अवस्थित है । अन्य देवता दैत नाग मुराल में, प्रौढ़ नाग साच में, झरयूंनाग सुराल नामक गांव में हैं । इसी प्रकार मलासनी और कोटासनी देवी किलाड़ में, कवास नामक गांव का नाग देवता बीमारी से पशुओं की रक्षा करता है । पांटो गांव का सिंहलण देवता पशुओं की रक्षा हिंसक वन पशुओं से करता है । मन्दिर में आने वाले चढ़ावे का उपयोग मन्दिर के पुनरोद्धार के लिए किया जाता है । सर्दियों में मन्दिर बंद कर दिये जाते हैं परन्तु बिशु (वैशाखी) को मन्दिर खोल दिये जाते हैं ।

आर्थिक जीवन

पंगवाल लोग प्रवास नहीं करते । सर्दियों में घर पर ही जीवन यापन करते हैं, अतः स्पष्ट है कि सर्दियों में उन्होंने अपना पेट तो पालना होता है । इसके साथ-साथ पशुधन का भी ध्यान रखना होता है । वे प्रथम रूप में पशुपालक और खेतिहर हैं । अतः गद्दियों की तरह वे बड़े रेवड़ रख ही नहीं सकते । केवल गुजारे के अनुसार अनुपाततः 8/10 भेड़ बकरियां और इतनी ही गाय पालते हैं । सर्दियों से बचने के लिए उन्हें घर की निचली छत में जिसे वे 'कोटा' कहते हैं इकट्ठा रहते हैं । खेती-बाड़ी भी सीमित रूप से होती है । कहीं-कहीं दो फसलें ले ली जाती हैं और कहीं तो केवल एक ही फसल प्राप्त की जाती है । समुद्र तल से 6,000 और 7,000 फुट ऊंचे इलाकों में दो फसल ली जाती हैं । ये इलाके

हैं -किलाड़, घरवास, लुज, करयास, पूंटो और साच परगना का निचला भाग, इन स्थानों पर मक्की भी उगाई जाती है। लुज और धरवास के इलाकों में मक्की की फसल उत्तम होती है। रबी की फसलें मक्की, फुल्लन, भरेस सियूल (एक सफेद बारीक अन्न), चीनार चणिया- स्थानीय बारीक चावल कोदा और आलू इत्यादि हैं। खरीफ की फसलें हैं– गेहूँ, जौ और एलो। जौ को सतु बनाने के काम में लाया जाता है खाया भी जाता है।

यहां बढ़िया आलू और मटर पैदा होता है परन्तु यातायात के साधन सुलभ न होने के कारण इसे बाहर भेजना आर्थिक दृष्टि से लाभप्रद नहीं है।

बरसात के मौसम में लोग अपने पशुओं को ऊंची चरागाहों पर ले जाते हैं जहां रहने के लिए मकान और थोड़ी खेती बाड़ी के लिए जमीन होती है। ऐसे स्थान को "अधवारी" कहते हैं। सर्दियों में माल-मवेशी उतर कर नीचे आ जाते हैं।

सुधरे बीज-फसलें और बागवानी

सरकार की ओर से धरवास में सुधरे बीज और पौधे उपलब्ध कराने के लिए फार्म कार्यरत हैं। लोग अब गेहूँ की सुधरी फसल उगाते हैं जो अधिक उपज देती है।

यहाँ सेब, बादाम और अखरोट की बढ़िया बागवानी हो सकती है परन्तु मार्किट तक पहुंचाने के लिए अधिक खर्च आ जाता है अतः लोगों का ध्यान इस ओर कम आकर्षित है। लेखक की धरवास गांव के एक अच्छे बागवान से भेंटवार्ता हुई। उन का नाम श्री सूरदास है। वह ग्राम पंचायत लुज के प्रधान भी हैं। उन्होंने सेब, बादाम और नाशपाती का एक बढ़िया बगीचा तैयार किया है। बगीचे में उन के कथनानुसार 300 से अधिक पेड़ हैं। उन में कुछ पौधे फल देने की अवस्था में आ गए हैं। लेखक ने अत्युत्तम सेब के फलों से लदे पेड़ देखे। बादाम के पौधे भी खूब फल दे रहे थे। नाशपाती के आकर्षक फल लटके थे। जब उनसे इस की उपयोगिता पर बातचीत हुई तो उनका कहना था कि जब तक यातायात के साधन सुलभ नहीं होते तब तक सेब को खाने और शराब बनाने के प्रयोग में लाया जा सकता है इस प्रकार जौ इत्यादि अन्न को खाने के लिए बचाया जा सकता है।

जंगली उपज और पंगवाल

वास्तव में पंगवाल लोगों का आर्थिक जीवन जंगली उपज पर निर्भर करता है। वे जंगलात विभाग से परमिट प्राप्त कर जंगली जड़ी बूटियां एकत्रित कर बेचते हैं जिनमें धूप, कुठ और कौड़ बहुतायत में पाये जाते हैं। धूप इस समय 40 से 50 रुपये प्रति किलो की दर से बिक जाता है। कौड़ नामक जड़ी इससे भी महंगी है। कुठ और बनककड़ी भी महंगी प्राकृतिक उपज है। गर्मियों के आरंभ में गुच्छी अत्यंत महंगी दरों पर बिकती है। लोग न्योजे और ठांगी की फसलें भी इकट्ठी कर बाजारों में बेच लेते हैं। काले जीरे की फसल भी महंगे दामों में बिकती है। यह भी वन उपज है।

उद्योग धंधे

पंगवाल सर्दियों में छः मास घरों में बंद रहते हैं। इतने लम्बे समय में उनकी गृहणियाँ ऊन कातती हैं और मरद पटु और धोबी (एक प्रकार की बढ़िया चटाई) बुनते हैं। ऊनी पटु और चद्दरें इस समय 300 से 400 रुपये प्रति की दर से बिक जाते हैं। ऊन उन के पास सीमित होती है अन्यथा इस उद्योग से उन्हें अच्छे पैसे मिल सकते हैं।

अन्य धंधे

सरकार की ओर से आजकल सड़क निर्माण और भवन निर्माण का कार्य जोरों पर है अतः बहुत से लोग मिस्त्री का काम करते हैं जिससे उन्हें 50 से 60 रुपये प्रतिदिन मिल जाते हैं। अन्य साधारण मजदूर को 27 से 30 रुपये प्रतिदिन के हिसाब से मजदूरी मिल जाती है। कुछ बेकार पढ़े लिखे युवक दुकानदारी का धंधा भी करने लगे हैं। बहुत कम लोग सरकारी नौकरी पर तैनात हैं।

खनिज पदार्थ

पांगी में कई प्रकार के खनिज पदार्थ पाये जाते हैं जिन में माइका (अबरक) अधिक संख्या में है परन्तु अभी तक इस की बिक्री यहां नहीं हो रही है। पांगी की सीमा पर जम्मू-कश्मीर सरकार के अधीन नीलम की खान है। कुछ लोग वहां भी काम करने चले जाते हैं।

निकट भविष्य में यातायात के उन्नत होने पर पांगी एक अच्छा पर्यटक स्थल बन सकता है। कई प्रकार की नकदी फसलें निर्यात योग्य हो सकती हैं। अब इस पिछड़ेपन को दूर होने में कुछ ही दिन लगेंगे।

ग्राम व डा० प्रीणा
वाया-मैहला
जि० चम्बा (हि०प्र०)-176 311

संस्मरण

गांधीजी की श्रम के प्रति निष्ठा

योगेश चन्द्र शर्मा

घटना लंदन की है । अनेक भारतीय नवयुवक, अपने अध्ययन अथवा अन्य कार्यों के सिलसिले में वहां रहते थे । राष्ट्रीयता की भावना से ओतप्रोत इन नवयुवकों ने अपना एक संघ भी बनाया हुआ था । 1909 की बात है । ये नवयुवक अपना एक समारोह आयोजित करना चाहते थे । कार्यक्रम बहुत सीधा सादा था । पहले भोजन और बाद में भाषण तथा विचारगोष्ठी । समारोह के लिए एक अध्यक्ष की तलाश थी । संयोगवश उन्हीं दिनों गांधीजी का भी लंदन जाना हुआ । दक्षिण अफ्रीका में किये गये सत्याग्रह के कारण तब तक गांधीजी की ख्याति काफी अधिक फैल चुकी थी । इसलिए इन नवयुवकों ने अपने समारोह की अध्यक्षता के लिए गांधीजी से ही निवेदन किया । गांधीजी ने स्वीकार भी कर लिया, किन्तु साथ ही यह शर्त लगा दी कि भोजन पूर्णतः शाकाहारी हो और संपूर्ण कार्य नवयुवक स्वयं मिलकर करें । शर्त एकदम नयी और अलग किस्म की थी । इन नवयुवकों को इस प्रकार के कार्य का कोई अनुभव नहीं था । फिर भी उन्होंने सहज रूप में और प्रसन्नता से इस शर्त को स्वीकार कर लिया ।

भोजन के लिए सभी आवश्यक वस्तुएं बाजार से खरीदी गयी और निर्धारित दिन सुबह से ही सभी नवयुवक अपनी अपनी रुचि के अनुसार कार्य में जुट गए । जब कोई बात समझ में नहीं आती तो वे एक दूसरे से सलाह करते और आपस में सहायता भी करते । ये युवक भारत के विभिन्न क्षेत्रों से थे और उनमें से अनेक एक दूसरे से भलीभांति परिचित भी नहीं थे । फिर भी सभी दत्तचित्त होकर अपने-अपने कार्य में जुटे हुए थे । इन नवयुवकों में एक ऐसा दुबला पतला व्यक्ति भी था, जिसने अपने आप ही बर्तन साफ करने, झाड़ू देने और सब्जियों को काटने का काम संभाल लिया था । इन कार्यों को अपेक्षाकृत हीन समझा जाता है । इसलिए प्रारंभ में लोग इस कार्य से बचने की कोशिश कर रहे थे । जब इस युवक ने स्वयं ही आगे बढ़कर यह काम करना शुरू कर दिया तो कुछ अन्य व्यक्ति भी उसमें सहयोग देने लगे और इस प्रकार सभी कार्य सुचारु ढंग से आगे बढ़ने लगा । कार्य के प्रति इस दुबले पतले युवक की निष्ठा और लगन विशेष रूप से दर्शनीय और प्रशंसनीय थी ।

संध्या को समारोह के संयोजक तथा संघ के कुछ अन्य अधिकारी वहां पर आये जो अभी तक बाहर के अन्य कार्यों में लगे हुए थे । उन्होंने तैयारियों को देखा और कार्यकर्ताओं से कुछ बातचीत की । इसके बाद इधर-उधर के कुछ बचे खुचे काम निपटाये भी और तब, मुख्य अतिथि तथा समारोह के अध्यक्ष गांधीजी की प्रतीक्षा करने लगे । अचानक ही उनकी दृष्टि उस दुबले पतले युवक पर पड़ी जो अब भी बड़ी लगन के साथ काम में जुटा हुआ था । देखते ही संयोजक और अन्य परिचित व्यक्ति आश्चर्यचकित रह गये । उन्होंने कार्यकर्ताओं से पूछा—"ये यहां कब से हैं ?"

"सुबह से ही"—कार्यकर्ताओं ने उत्तर दिया । फिर उत्सुकता से पूछा—"क्यों ? क्या बात है ? कौन हैं ये ?"

"गांधीजी !" संयोजक ने धीरे से उत्तर दिया—"हमारे आज के समारोह के अध्यक्ष और दक्षिण अफ्रीका में सत्याग्रह का सूत्रपात करने वाले विश्व प्रसिद्ध व्यक्ति ।"

अब तो सभी लोग आश्चर्यचकित रह गये । वे दौड़कर गांधीजी के पास पहुंचे । उन्हें न पहचान पाने और कष्ट देने के लिए क्षमा याचना करने लगे तथा उनसे कार्य से हटने का आग्रह करने लगे किन्तु गांधीजी नहीं माने । क्षमा याचना का भी कोई औचित्य उन्हें समझ में नहीं आया । वे अपना काम पूरा करके ही वहां से हटे । उसके बाद सब के साथ मिलजुल कर भोजन किया । भोजन के उपरांत उन्होंने निर्धारित कार्यक्रम के अनुसार समारोह की अध्यक्षता भी की और अपने अध्यक्षीय भाषण में श्रम के महत्व पर प्रकाश डालते हुए इस बात पर जोर दिया कि श्रम करने से व्यक्ति की प्रतिष्ठा बढ़ती ही है, घटती नहीं । इसलिए हमें काम करने में सदैव आगे रहना चाहिए ।

परिश्रम से कमायी गयी धनराशि को गांधीजी बहुत सम्मान की दृष्टि से देखते थे, चाहे उसकी मात्रा कितनी ही कम क्यों न हो । एक बार तो वे इसी प्रकार केवल एक पैसे के लिए अपने साथियों से उलझ पड़े थे । घटना उन दिनों की है, जब हरिजनों के उद्धार के लिए वे संकल्प ले चुके थे और उनकी सहायता के लिए धन एकत्रित कर रहे थे । वे जहां

भी जाते अपने साथ एक छोटी पेटी रखते थे। भाषण देने के बाद वे अपने हाथ फैला देते। लोग धन देते और गांधीजी उसे पेटी में डाल देते। इसी प्रकार एक बार जब वे धन एकत्रित कर रहे थे तो एक गरीब मजदूर ने उन्हें बड़ी श्रद्धा के साथ एक पैसा दिया। गांधीजी ने बड़े प्रेम से उसे स्वीकार किया। दूसरे लोगों के द्वारा दिये गये धन को भी वे अपने हाथों में ले रहे थे। जब हाथ भर गये तो वे उस धन को पेटी में डालने लगे। अचानक ही एक पैसे का वह सिक्का हाथ से नीचे फिसला और लुढ़क कर कहीं खो गया। गांधीजी इधर उधर देखने लगे। भीड़ काफी अधिक थी। सो लोगों को हटाकर और जमीन पर झुककर वे उस पैसे को ढूंढने लगे। गांधीजी के निकट अनेक धनीमानी लोग भी खड़े थे। उन्होंने गांधीजी से कहा—"आप उस एक पैसे की क्यों इतनी चिंता कर रहे हैं? गिर गया है तो गिर जाने दीजिए। हम उसके बदले में आपको ढेर सारे रुपये दे देते हैं।"

गांधीजी को उनकी यह बात अच्छी नहीं लगी। बोले—"गरीब आदमी के श्रम से कमाया गया वह एक पैसा आप लोगों के हजारों लाखों रुपयों से अधिक मूल्यवान है। मैं उसे नहीं खो सकता।

इसके बाद गांधीजी नीचे जमीन पर बैठकर उस पैसे को ढूंढने लगे। कुछ अन्य लोगों ने भी सहायता की। कुछ देर बाद जब वह पैसा मिल गया, तभी उन्हें चैन मिला।

गांधीजी इस बात पर भी बहुत ध्यान देते थे कि जो सार्वजनिक संस्थाएं जनता के गाढ़े पसीने की कमाई के चंदे से चलती हैं, उनमें धन का किसी भी तरह दुरुपयोग न हो। एक बार इसी प्रकार की एक सार्वजनिक संस्था के दो प्रतिनिधि उनके पास किसी सार्वजनिक मामले में सलाह लेने के लिए आये। गांधीजी ने अपनी सलाह दे दी। फिर उनसे पूछा—"आप लोग मेरे पास अपनी संस्था के खर्चे से ही आये होंगे?"

प्रतिनिधियों के हामी भरने पर गांधीजी ने उन्हें समझाते हुए कहा—"सलाह लेने का यह कार्य तो मामूली पोस्टकार्ड से भी हो सकता था। उसके लिए संस्था का धन व्यय करने की क्या आवश्यकता थी? यदि व्यक्तिगत रूप में आना जरूरी समझा गया तो उसके लिए एक ही व्यक्ति पर्याप्त था। दो व्यक्तियों का अनावश्यक व्यय भार संस्था पर डालने से क्या लाभ? यदि सार्वजनिक संस्थाओं में जनता के धन का इस तरह दुरुपयोग किया जायेगा तो जनता उनमें कैसे विश्वास करेगी और संस्थाएं कैसे चलेंगी?

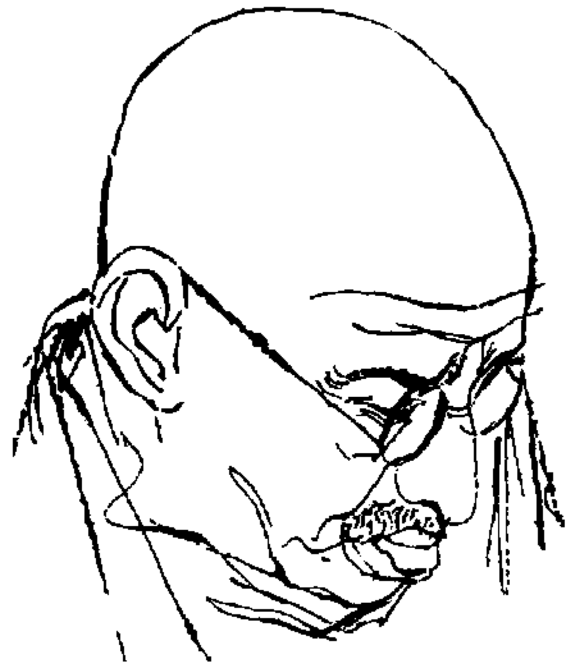

प्रतिनिधियों को अपनी गलती का अहसास हुआ। उन्होंने क्षमा मांगी और भविष्य में इस तरफ ध्यान रखने का वायदा किया।

श्रम के प्रति निष्ठा सभी परिजनों की बनी रहे, इस बात की तरफ भी गांधीजी पूरा ध्यान रखते थे। धर्मपत्नी श्रीमती कस्तूरबा को भी उनका यही निर्देश था कि वे अपना संपूर्ण कार्य स्वयं करें। एक बार गांधीजी के परम भक्त श्री नाथसिंह आश्रम में गांधीजी से मिलने आये तो वहां उन्होंने बा को कुंए से पानी खींचते देखा। वे बड़े दुखी हुए। तत्काल 'बा' के निकट पहुंचे और बोले—"आप यहां से हट जाइए। कुंए से पानी मैं खींच दूंगा।"

शेष पृष्ठ 48 पर

नव वर्ष मंगलमय हो

खेतों की माँग

विजय कुमार शर्मा

(चाय का पानी उबल रहा है । गंगू की पत्नी चूल्हे के पास बैठी हुई साग काट रही है । गंगू दरवाजे के साथ ही उदास-सा बैठा हुआ है हुक्का गुड़गुड़ा रहा है । तभी अचानक कल्लू आ जाता है) ।

कल्लू : गंगू भाई राम-राम ।

गंगू : (कल्लू की ओर देखता हुआ) राम-राम भाई, राम-राम । आओ बैठो ।

कल्लू : (बैठता हुआ) कहो भाई क्या हाल हैं ? कैसी फसल रही इस वर्ष ?

गंगू : (हुक्के को देते हुए) भैया, फसल के विषय में कुछ मत पूछो, जितना बीज डाला था शायद उतना भी मुश्किल से ही वापस आये ।

कल्लू : तुम ठीक कह रहे हो । हमारे गांव में सभी का यही हाल है । पर इसमें हमारा-तुम्हारा क्या दोष ? न तो समय पर पानी ही बरसा और न ही हम लोगों ने खाद की ओर ध्यान दिया ।

गंगू : भैया, हमारे साथ वाले गांव में तो बहुत अच्छी फसल है ।

कल्लू : उस गांव पर तो सरपंच जी की छाया है । सरपंच जी ने बढ़िया खाद सरकार से लेकर दी थी उन्हें । यदि पानी भी ठीक मिल जाता तो इतनी फसल होती कि रखने की जगह नहीं मिलती ।

गंगू : पर सरपंच तो हमारे गांव का भी वही है । (तभी अचानक सरपंच जी भी वहां आ जाते हैं ।)

सरपंच : किसान भाइयों राम-राम ।

(गंगू और कल्लू दोनों एक साथ कहते हैं) : राम-राम सरपंच जी राम-राम ।

गंगू : आज तो मेरा अहोभाग्य है कि आप मेरी झोपड़ी में पधारे हैं ।

कल्लू : (गंगू की ओर देखता हुआ व्यंग से) तुम्हारा कहना भी ठीक है परन्तु सरपंच जी भी क्या करें ? सारा समय तो इनका अपने गांव वालों के पास ही लग जाता है । हमारे गांव में आने के लिये समय ही कहां ?

सरपंच : (नम्रता से) भाइयों, ये तुम्हारा भ्रम है कि यह गांव तुम्हारा है और वह मेरा है । ऐसी बात मत सोचो, मैं दोनों गांवों को अपना ही समझता हूं और तुम सब मेरे भाई हो । आप लोग विश्वास रखिये । मेरे मन में किसी प्रकार का भेद-भाव नहीं है । मैं तुम सब को सुखी देखना चाहता हूं ।

कल्लू : सरपंच जी, यदि आपके मन में भेद-भाव न होता तो शायद हमें भी बढ़िया खाद मिल जाती । (और फिर गंगू की ओर देखते हुए) क्यों गंगू भाई ठीक है न ?

गंगू : हां तुम ठीक कह रहे हो भैया । लेकिन इस में सरपंच जी का क्या दोष है ? आजकल के युग में सभी उगते हुए सूर्य को नमस्कार करते हैं, डूबते को नहीं ।

सरपंच : भाइयों, मेरा कोई दोष नहीं है । तुम लोगों की ही कमजोरियां हैं । खाद लाने के समय भी मैंने तुम लोगों से कहा था और चंदा भी मांगा था । लेकिन तुम्हें विश्वास नहीं हुआ । तुम सब के मन में यही रहा कि सरपंच हमसे पैसा लेकर खा जायेगा । उस गांव वालों ने मुझ पर विश्वास किया, इसलिये उन्हें बढ़िया खाद मिल गई । अब वे लोग पानी की समस्या को भी दूर करने के लिये मुझ से कह रहे हैं । इस विषय में मैंने उन्हें एक सुझाव दिया है और उन लोगों ने मेरे सुझाव को बड़ी खुशी से मान भी लिया है ।

कल्लू : सरपंच जी, क्या सुझाव है ? हमें भी बतलाने का कष्ट करेंगे क्या ?

सरपंच : मैंने उन्हें सुझाव दिया है कि हर घर से पचास-पचास रुपये चन्दे के रूप में लिये जायें । फिर कुछ पैसा हम सरकार से लेंगे । उन पैसों से ट्यूबवैल तथा कुंओं का प्रबंध करेंगे । ऐसा करने से हम लोग वर्षा के भरोसे पर नहीं रहेंगे ।

गंगू : सरपंच जी, हमारे गांव पर भी कृपा करो न । देखो न इस साल वर्षा न होने के कारण बीज भी मुश्किल से ही वापस आयेगा ।

कल्लू : हां सरपंच जी, कल्लू ठीक कह रहा है ।

सरपंच : भाइयों । मेरे मन में तुम्हारे या तुम्हारे गांव के प्रति किसी प्रकार का भेद या छल-कपट नहीं है । मुझे तुम लोगों से पूरी-पूरी हमदर्दी है । लेकिन तुम्हारे गांव वाले तो मेरी बात पर विश्वास ही नहीं करते । यदि तुम्हारे गांव वाले भी मेरा

साथ दें तो मैं दोनों गांवों को स्वर्ग के समान बना दूं और फिर कुछ क्षण रुकने के बाद सरपंच जी फिर बोले, सुनो, आज शाम को रामू के घर मीटिंग है। यदि तुम्हारे गांव वाले शामिल होना चाहें तो आ जायें। मैं हर समय आप लोगों की सहायता करने के लिये तैयार हूं। (इतना कहकर सरपंच जी चले जाते हैं)।

दूसरा दृश्य

समय : शाम के सात बजे।

स्थान : रामू के घर का बरामदा।

(दोनों गांवों के लोग इकट्ठे होकर बरामदे में बैठे हैं। सरपंच जी उन सब के बीच खड़े होकर कहने लगते हैं।)

सरपंच : भाइयो। आज मैं बहुत प्रसन्न हूं क्योंकि दोनों गांवों के लोग आज यहां इकट्ठे हुए हैं। शायद आप लोगों को मालूम नहीं होगा कि आज की मीटिंग किस विषय में है। आज मैं आप लोगों के सामने ऐसे सुझाव रखूंगा जो दोनों गांवों के लिये लाभदायक हैं। (सरपंच की इस बात को सुनते ही सभी लोग एकटक से उनके मुंह की ओर देखने लगते हैं) सरपंच जी आगे कहते हैं। भाइयो, आप सब किसान हैं और खेती के सहारे जीते हैं। आप लोगों के सहारे ही शहरों के लोग जीते हैं। यदि आप के खेतों में पैदावार अच्छी है तो देश सुखी है, यदि खेतों में पैदावार अच्छी नहीं है तो देश भी खुशहाल नहीं रह सकता। लेकिन एक बात का ध्यान रहे कि खेतों में पैदावार बढ़ाने के लिये केवल मेहनत ही काफी नहीं है। मेहनत के साथ-साथ खेतों की मांग को भी पूरा करना पड़ेगा तभी अच्छी फसल पैदा हो सकती है ?

एक पुरुष : (तुरन्त उठकर आश्चर्य से) क्या खेत भी कुछ मांग रहे हैं। हां, खेतों की भी मांग है। जब तक आप लोग खेतों की मांग को पूरा नहीं करेंगे तब तक खेतों से अच्छी फसल की उम्मीद मत रखो।

वही पुरुष : क्या मांग है खेतों की ?

सरपंच : खेत आप लोगों से अच्छे बीज, बढ़िया खाद, नई किस्म के औजार और सिंचाई के लिये उपयुक्त पानी चाहते हैं। सब से पहले हमारे खेतों के लिये पानी की आवश्यकता है। पानी के लिये हमारी सरकार काफी ध्यान दे रही है। मैंने भी सोचा था कि सरकार से कहकर नहर का प्रबंध करूं परन्तु इन दोनों गांवों में कहीं से भी नहर नहीं आ सकती है। केवल वर्षा पर ही ये गांव निर्भर हैं लेकिन वर्षा समय पर हो, कुछ भरोसा नहीं। अतः मेरा विचार है कि आप सब लोग मिल कर पचास-पचास रुपये चंदे के रूप में जमा करें। कुछ सहायता सरकार भी करेगी। उन पैसों से दोनों गांवों के लिये ट्यूबवैल तथा कुंओं का प्रबंध हो सकता है। इसके अतिरिक्त अच्छे औजार, बढ़िया खाद तथा बीजों का प्रबंध भी मैं करूंगा। आप लोगों को किसी प्रकार की चिन्ता करने की जरूरत नहीं। मुझे केवल आप लोगों का विश्वास और सहयोग चाहिये। मुझे आशा है कि आप सभी मेरे विचारों से सहमत होंगे।

एक युवक : (तुरन्त उठकर) यह सब कुछ आप हमारे लिये ही तो कर रहे हैं। भला फिर हम लोग क्यों न सहमत हों ?

(फिर सरपंच जी सब लोगों के चेहरे के भावों को देखते हैं। उन्हें ऐसा लगता है कि कोई भी विरोध में नहीं है। वह आगे कहते हैं।)

सरपंच : भाइयो, आप सब पचास-पचास रुपये रामू को दे दें। यह काम मैंने रामू के जिम्मे लगाया है। मुझे पूर्ण विश्वास है कि आप लोग शीघ्र ही इस काम को पूरा करेंगे। उसके बाद का काम मेरा है, उसे मैं जल्दी पूरा करने की कोशिश करूंगा। मुझे आशा है कि हमारे इस कदम से दूसरे गांवों वाले भी सीख लेंगे।

(और फिर तालियों की गड़गड़ाहट के साथ मीटिंग समाप्त हो जाती है)।

तीसरा दृश्य

(हरे-भरे खेत लहरा रहे हैं। गंगू प्रसन्न मुद्रा में खड़ा खेतों को देख रहा है। तभी अचानक कल्लू आ जाता है)।

कल्लू : गंगू भाई राम-राम।

गंगू : राम-राम कल्लू, भाई राम-राम। कहां जा रहे हो ? आओ बैठो बीड़ी पीते जाओ। (गंगू एक बीड़ी कल्लू को देते हुए और एक स्वयं सुलगाता है।)

कल्लू : (बीड़ी का धुंआ आकाश की ओर छोड़ते हुए) गंगू भैया, फसल को देखकर तो मेरा कलेजा दुगुना हो रहा है। मेरी याद में ऐसी फसल आज तक नहीं हुई। अब के तो हम लोगों के सब दुख दूर हो जायेंगे।

गंगू : भैया, ये सब सरपंच जी की कृपा है। (उसी समय सरपंच जी आ जाते हैं।)

सरपंच : मेरे किसान भाइयों क्या हाल है ?

(उत्तर में दोनों, कल्लू और गंगू सरपंच जी के आगे हाथ जोड़कर खड़े हो जाते हैं)।

गंगू : (जेब में से बीड़ी निकाल कर सरपंच जी को देते हुए) बीड़ी पीजिये । (सरपंच जी बीड़ी को मुंह से लगा कर कल्लू की ओर देखते हुए)

सरपंच : कल्लू भाई क्या सोच रहे हो ?

कल्लू : (झिझकता हुआ) सरपंच जी ये हरे-भरे खेत जो लहरा रहे हैं, ये आप की ही देन है । आप की कृपा से ही आज हम सब प्रसन्न हैं । परंतु...

सरपंच : रुक क्यों गया । कह न क्या बात है ?

कल्लू : यदि दोनों गांवों के बीच धान कूटने की मशीन लग जाती तो...

सरपंच : (कल्लू की पीठ थपथपाते हुए) मैं तुम्हारे इस सुझाव से बहुत ही प्रसन्न हूं । इसके अतिरिक्त और भी कई आवश्यकताएं बाकी हैं । लेकिन इस विषय में हमें सब से पहले आपस में मीटिंग करनी होगी ।

कल्लू : जिस दिन आप कहेंगे, उसी दिन मीटिंग हो जायेगी ।

सरपंच : दो चार दिन में कर लेंगे ।

गंगू : सरपंच जी, शुभ काम में देर क्यों ? आज ही शाम को रख लो न ।

कल्लू : हां, सरपंच जी, गंगू ठीक ही कर रहा है । जो काम कल करना उसे आज ही क्यों न किया जाये ? फिर ऐसा काम जिसमें लाभ ही लाभ हो, उसे तो जितनी जल्दी हो सके उतनी जल्दी करना चाहिये ।

सरपंच : सो तो ठीक है, लेकिन इतनी जल्दी सभी लोगों को सूचित भी तो नहीं किया जा सकता ।

गंगू : इसकी चिन्ता मत कीजिए । मैं समय से पहले ही सभी को सूचना दे दूंगा ।

कल्लू : हां सरपंच जी, इस काम को तो हम हवा की भांति कर देंगे ।

सरपंच : (मुस्कुराते हुए) यदि तुम्हारी यही मरजी है तो ठीक है । सभी को सूचित कर दो कि रात को आठ बजे रामू के घर इकट्ठे हो जायें ।

चौथा दृश्य

समय : शाम के आठ बजे ।

स्थान : रामू के घर का बरामदा ।

(दोनों गांवों के लोग ठीक समय पर इकट्ठे हो जाते हैं) ।

सरपंच : भाइयों, शायद आप लोगों को मालूम नहीं होगा कि आज अचानक हम क्यों इकट्ठे हुए हैं ? आज हम इसलिये इकट्ठे हुए हैं कि जो भी कमियां हमारे गांव में रह गई हैं, हम सब मिलकर उन्हें दूर करें । सरकार तथा आप लोगों के सहयोग से हमारी बहुत-सी समस्याएं हल हो गई हैं लेकिन अभी भी बहुत-सी बाकी हैं, जिन्हें हम सबने मिलकर हल करना है । मैं चाहता हूं कि गांव में छोटे-मोटे उद्योग खोले जायें ताकि गांव वालों को खेती के अलावा दूसरी आय भी हो सके । मेरे विचार में धान कूटने की मशीन, ऊन की चादरें बनाने का कारखाना, मुर्गी तथा मछली पालन और रेशम बनाना आदि धंधे खोलने का विचार है । आप लोगों में से भी बहुत लोगों ने ऐसे सुझाव दिये हैं । लेकिन ये सब कुछ तभी हो सकता है जब हम सब के मन में एक-दूसरे के प्रति प्रेम हो, सहयोग की भावना हो । वैसे तो आप लोगों ने सहयोग की भावना में कोई कमी नहीं रखी है । लेकिन इस काम को पूरा करने के लिये पहले से भी अधिक साहस और सहयोग की जरूरत है । लेकिन मुझे पूर्ण विश्वास है कि आप लोग इस काम को सफलता का ताज पहनायेंगे । अतः मेरा आप सब से अनुरोध है कि सभी सौ-सौ रुपये दें ।

एक पुरुष : (तुरन्त उठकर) सरपंच जी, एक साथ सौ रुपये देने में मैं असमर्थ हूं । हो सकता है मेरे जैसे और भी कई भाई असमर्थ हों ।

सरपंच : ठीक है, तुम लोग चाहो तो दो, तीन या चार किश्तों में भी दे सकते हो । किसी को भी परेशान होने की जरूरत नहीं है ।

गंगू : पैसे रामू के पास देने हैं या आपके पास ?

सरपंच : अपने गांव से आप इकट्ठे कर लेना और रामू अपने गांव से इकट्ठे कर लेगा । (और तालियों की गड़गड़ाहट के साथ मीटिंग खत्म हो जाती है ।)

सरपंच : (जाते हुए लोगों को रोककर चुटकी लेते हुए) भाइयों, मेरी आप लोगों से हाथ जोड़कर बिनती है कि अब चुनाव आ रहे हैं, मेरा ध्यान रखना ।

(भीड़ में से एक युवक-सरपंच जी, आप को वोट मांगने की आवश्यकता नहीं । और पूरे गांव में तालियों की आवाज गूंज उठती है) ।

(पर्दा गिरता है)

1272-मल्टी स्टोरी, तिमारपुर,
दिल्ली- 110 057

ग्रामीण स्वास्थ्य एक चुनौती

विजय शंकर

भारत गांवों का देश है। इसमें साढ़े पांच लाख से भी अधिक गांव हैं। तेजी से शहरीकरण के बावजूद आज भी इसकी लगभग 75 प्रतिशत जनसंख्या गांवों में रहती है। इस प्रकार देश की 85 करोड़ आबादी में से लगभग 62,162 करोड़ लोग गांवों में रहते हैं। इतनी बड़ी विशाल जनसंख्या के स्वास्थ्य की उपेक्षा करके कोई भी देश अपना सर्वांगीण विकास नहीं कर सकता। किसी भी देश के विकास पर उसके नागरिकों के खराब स्वास्थ्य का दूरगामी प्रभाव पड़ता है, चाहे कोई व्यक्ति कृषि, कारखाना, कार्यालय अथवा उत्पादन के किसी भी क्षेत्र में काम कर रहा हो, अच्छे स्वास्थ्य के बिना अपेक्षित उत्पादन बढ़ाने में सहयोग नहीं कर सकता। इसलिए देश के चौतरफा विकास के लिए इतनी बड़ी आबादी को नियंत्रित और स्वस्थ रखना न केवल आवश्यक है, बल्कि हमारे सामने एक जबर्दस्त चुनौती भी है।

मूल कारण गरीबी

गांवों और शहरों की गंदी बस्तियों में लोगों के खराब स्वास्थ्य का मूल कारण गरीबी है। जिन लोगों को दोनों समय का भोजन नहीं मिलता, उनके सम्बन्ध में पौष्टिक और संतुलित आहार की बातें करना अव्यावहारिक है। उनकी क्रयशक्ति इतनी कम होती है कि वे जरूरत की कोई भी वस्तुएं आसानी से नहीं खरीद सकते हैं। बेरोजगारी, अशिक्षा, स्वास्थ्य के प्रति लापरवाही, साधनहीनता और मजबूरी के कारण गन्दी बस्तियों में रहना आदि कुछ ऐसे कारण हैं जिनकी वजह से ग्रामीण स्वास्थ्य पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। इसलिए वे आम तौर पर मलेरिया, कालाजार, क्षय रोग और दृष्टिहीनता आदि खतरनाक बीमारियों से ग्रसित होते हैं। समाज के कमजोर वर्गों, खास तौर पर अनुसूचित जातियों और जनजातियों के अधिकांश लोगों की हालत तो और भी खराब है।

स्वास्थ्य के प्रति जागरूकता

सरकार ने इनकी हालत सुधारने के लिए आजादी के बाद से ही पंचवर्षीय योजनाओं के दौरान अनेक महत्वपूर्ण कदम उठाये हैं लेकिन जनसंख्या की विस्फोटक स्थिति तथा बड़े पैमाने पर फैले भ्रष्टाचार के कारण इन योजनाओं का लाभ उन लोगों तक नहीं पहुँच पाता जिनके लिए ये बनायी जाती हैं। सरकार को इसका आभास है। इसीलिए प्रधानमंत्री श्री पी०वी० नरसिंहराव ने अपना पद संभालने के बाद अपने प्रथम राष्ट्रीय प्रसारण में कहा था कि गांवों में रहने वाले गरीबों की दशा सुधारने के लिए सरकार अधिकाधिक ध्यान देगी। इसके लिए प्रशासन को और अधिक उत्तरदायी बनाया जायेगा और यह सुनिश्चित किया जाएगा कि विकास पर खर्च किया जा रहा प्रत्येक रुपया, उन तक पहुंचे जो इसके लाभ के हकदार हैं।

अच्छे स्वास्थ्य के लिए शिक्षा और स्वास्थ्य के प्रति जागरुकता बहुत जरूरी है। लोगों को बीमारियों और उनसे होने वाले भयंकर परिणामों के बारे में जानकारी देकर ग्रामीण स्वास्थ्य में व्यापक सुधार किया जा सकता है। स्वास्थ्य शिक्षा का महिलाओं में प्रसार करने और उनमें जागरुकता लाने के अनेक लाभ हैं। गांवों में आज भी कई लोग रोगों के निवारण के लिए भूत-प्रेत में विश्वास करते हैं और रोगी को दिखाने के लिए उन्हें ओझा के पास ले जाते हैं। इससे उनकी समय, शक्ति और पैसा भी बर्बाद होता है तथा कोई लाभ भी नहीं होता। कई बार रोगी की हालत जब बहुत बिगड़ जाती है तब इसे डाक्टर को दिखाया जाता है, लेकिन तब तक देर हो चुकी होती है। इसलिए ग्रामीण स्वास्थ्य के प्रति जागरुकता पैदा करने के लिए स्कूल शिक्षा प्रणाली, प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम तथा आकाशवाणी और दूरदर्शन में ऐसे कार्यक्रमों को भी महत्व देना चाहिए, जिससे लोगो में अंधविश्वास खत्म करने और एक वैज्ञानिक दृष्टि विकसित करने में मदद मिले। इसके लिए गांवों में प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों पर तैनात स्वास्थ्य निरीक्षकों की भी मदद ली जा सकती है।

पर्यावरण सुधार की आवश्यकता

लोगों के स्वास्थ्य पर पर्यावरण के असंतुलन का व्यापक प्रभाव पड़ता है। पेड़ों की बेतहाशा कटाई तथा गैर-नियोजित तरीके के कारखाने लगाने से पर्यावरण का संतुलन बिगड़ गया

है । इससे हवा और पानी के प्रदूषण में जानलेवा वृद्धि हुई है । पर्यावरण से संबंधित एक अनुसंधान संस्थान की एक रिपोर्ट के अनुसार देश की सत्तर प्रतिशत नदियां प्रदूषित हो गई हैं । नदियों का हमारे सामाजिक और आर्थिक जीवन में विशेष महत्व है । इनका जल पीने तथा सिंचाई के काम आता है इसलिए इन्हें प्रदूषित होने से बचाना अत्यन्त आवश्यक है । गांवों में अधिकांश लोग कुओं से पानी पीते हैं । उनमें भी गंदगी के कारण बीमारियों के अनेक कीटाणु रहते हैं, लेकिन अशिक्षा और स्वास्थ्य के प्रति लापरवाही के कारण कुओं की सफाई की तरफ उनका विशेष ध्यान नहीं रहता । इसलिए प्रदूषित पानी पीने से लोगों में अनेक प्रकार की बीमारियां पैदा हो जाती हैं ।

जल और वायु को प्रदूषित होने से बचाने के लिए प्रदूषण बोर्डों को और अधिक शक्तिशाली तथा अधिकार सम्पन्न बनाना होगा । अक्सर देखने में आता है कि प्रदूषण नियंत्रित करने के लिए जिम्मेदार अधिकतर अधिकारी अपने कर्त्तव्य के प्रति गम्भीर नहीं हैं । अधिकारियों की इस लापरवाही की तरफ उच्चतम न्यायालय ने भी टिप्पणी की है । प्रदूषण नियंत्रित करने के लिए जिम्मेदार संस्थाएं केन्द्र अथवा राज्य सरकारों द्वारा गठित प्रदूषण बोर्डों के सीधे अधिकार क्षेत्र में नहीं आती हैं । सरकार को इन्हें प्रदूषण बोर्डों के नियंत्रण में लाने के लिए आवश्यक कदम उठाना चाहिए । दरअसल प्रदूषण के खतरों से आगाह करने के लिए देश में एक सशक्त जन आन्दोलन चलाने की जरूरत है । कीटाणुयुक्त प्रदूषित पानी पीने के कारण इस देश में लगभग 15 लाख बच्चे प्रतिवर्ष अकाल मृत्यु के शिकार हो जाते हैं । इनमें से अधिकांश बच्चे समाज के कमजोर वर्गों के होते हैं । जल और वायु के प्रदूषण को रोकने के लिए चमड़े, चीनी और रसायन से संबंधित उद्योगों को आबादी वाले क्षेत्रों से काफी दूर स्थापित करना चाहिए, जिससे इनके भयावह परिणामों से लोगों को बचाया जा सके । ऐसे कारखाने स्थापित करने के लिए विशेषज्ञों की एक समिति बनानी चाहिए जो छानबीन के बाद सिफारिश कर सके कि इस प्रकार के कारखानों को कहां लगाना उपयुक्त होगा ।

प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र

ग्रामीण स्वास्थ्य को कारगर बनाने में प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों का महत्वपूर्ण स्थान है, क्योंकि ये केन्द्र समग्र ग्रामीण स्वास्थ्य को एक आधारभूत ढांचा प्रदान करते हैं । हमारी राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति में अस्पताल पर आधारित नगरीय चिकित्सा सेवा को क्षेत्रोन्मुख स्वास्थ्य सेवा में बदलने पर विशेष जोर दिया गया है , क्योंकि नगरों में आधुनिक उपकरणों से सुसज्जित बड़े अस्पतालों और विशेषज्ञ डाक्टरों से गांव में रहने वालों को कोई खास मदद नहीं मिल सकती है । ऐसे अस्पताल और डाक्टर आम आदमी की पहुंच से बाहर होते हैं । शहरों और गांवों के बीच काफी दूरी तथा रोगी को समय से नगरीय अस्पतालों में पहुंचाना भी अधिकांश लोगों के लिए एक बहुत बड़ी समस्या है । ऐसे में प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र गांवों में जन-जन तक चिकित्सा सुविधाएं पहुंचाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं । इनका उद्देश्य सस्ते दाम में जरूरतमंद लोगों को चिकित्सा सुविधाएं उपलब्ध कराना है । मैदानी क्षेत्रों में प्रति 30 हजार की आबादी के लिए तथा पहाड़ी, आदिवासी और पिछड़े क्षेत्रों में प्रति 20 हजार आबादी के लिए एक-एक प्राथमिक केन्द्र खोलने की सरकार की योजना है । इसके लिए सभी ग्रामीण औषधालयों को प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों में बदलने का प्रस्ताव है, जिससे कि वे एक प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र के रूप में कार्य कर सकें और लोगों को समुचित स्वास्थ्य सेवाएं उपलब्ध करा सकें । प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र अगर सही ढंग से कार्य करें तो निश्चय ही ग्रामीणों को इससे बहुत लाभ मिलेगा लेकिन प्राप्त जानकारी के अनुसार, इनमें से बहुत से केन्द्रों के कार्य संतोषजनक नहीं हैं । अनेक स्वास्थ्य केन्द्रों पर महीनों तक डाक्टर नहीं रहते और डाक्टर रहते भी हैं तो वहां दवाइयों का नितान्त अभाव रहता है । इन सब खामियों को रोकने के लिए प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों के कामकाज की कड़ी निगरानी रखने की जरूरत है, अन्यथा इसका उद्देश्य ही विफल हो जायेगा ।

प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों की अवधारणा को सफल बनाने के लिए इन केन्द्रों से संबंधित महिलाओं और पुरुषों को सघन प्रशिक्षण देने की जरूरत है । उन्हें चिकित्सा संबंधी जानकारी देने के साथ ही, अपने कर्त्तव्य के प्रति सतर्कता, रोगी के साथ सहानुभूति और संवेदना जैसे मानवीय गुणों को विकसित करने पर जोर देना चाहिए । इन गुणों के अभाव में कई बार ऐसा होता है कि रोगी दर्द से कराहता रहता है और डाक्टर उसकी उपेक्षा कर देता है , जिससे रोग का समय पर निदान नहीं हो पाता और रोगी को एक गम्भीर शारीरिक और मानसिक यंत्रणा से गुजरना पड़ता है । इस तरह की लापरवाही और अनावश्यक विलम्ब के कारण रोग ला-इलाज हो जाता है और रोगी को इसकी कीमत अपनी जान देकर चुकानी पड़ती है । यह संतोष की बात है कि महिला और पुरुष चिकित्सा कार्मिकों को प्रशिक्षण देने की तरफ सरकार का ध्यान गया है और इस दिशा में उसने कदम भी उठाये हैं, लेकिन हमारी इतनी विशाल जनसंख्या की जरुरतों को पूरा करने के लिए वे पर्याप्त नहीं है । उनका और अधिक विस्तार करने तथा उन्हें सक्षम बनाने

की आवश्यकता है । ग्रामीण क्षेत्रों में प्रसव कराने के लिए दाइयों का विशेष महत्व है, लेकिन कठिनाई यह है कि इनमें से आज भी बहुत सी दाइयाँ प्रसव के लिए पुराने तरीके अपनाती हैं । आज जरुरत इस बात की है कि सभी ग्रामीण दाइयों को आवश्यक और आधुनिक प्रशिक्षण दिया जाए ताकि उनकी कार्यकुशलता बढ़े और वे अपना कार्य सहजता से कर सकें । सरकार ने इस दिशा में भी कदम उठाये हैं । दाइयों की कार्यकुशलता में सुधार लाने और परिवार नियोजन के आदर्श का प्रचार-प्रसार करने के लिए उनके प्रशिक्षण की योजना शुरु की गई है । सरकारी आंकड़े के अनुसार 1989-90 के दौरान 9341 दाइयों को प्रशिक्षण दिया गया, जबकि लक्ष्य 10,000 दाइयों को प्रशिक्षण देने का था ।

भारतीय चिकित्सा प्रणाली

ग्रामीण स्वास्थ्य को सस्ता और सुलभ बनाने में परम्परागत वैद्यों और जड़ी बूटियों का आज भी अपना एक विशिष्ट महत्व है । इस दिशा में पर्याप्त ध्यान देकर इसे और भी उपयोगी बनाया जा सकता है । इसके साथ ही ग्रामीण स्वास्थ्य को कारगर बनाने के लिए भारतीय चिकित्सा पद्धति का गांवों में विशेष रूप से प्रचार करना चाहिए । इस पद्धति में आयुर्वेद, यूनानी, तिब्बिया, प्राकृतिक चिकित्सा और योग आते हैं । भारत सरकार ने समस्त स्वास्थ्य सेवा कार्यक्रम के एक भाग के रूप में इन सबको बढ़ावा देने का निश्चय किया है । अक्सर देखा जाता है कि बड़े शहरों में भारतीय चिकित्सा पद्धतियों के जरिए इलाज कराने में लोग कम दिलचस्पी लेते हैं, लेकिन सस्ता होने के कारण गांवों में आज भी इनके लिए लोगों में आकर्षण है । इसलिए इन पद्धतियों को गांवों में आम लोगों तक पहुंचाने के लिए सरकार को विशेष कदम उठाना चाहिए ।

खाद्य-अपमिश्रण की समस्या

आम नागरिकों के स्वास्थ्य पर खाद्य पदार्थों और दवाओं में मिलावट की वजह से भी बहुत खतरनाक असर पड़ता है । खाद्य तेलों, मसालों, दालों और जीवनोपयोगी दवाओं में भी आज मिलावट आम बात हो गई है । इनके सेवन से लोगों में तरह तरह की बीमारियां पैदा हो जाती हैं और अंत में मौत की शय्या पर सो जाते हैं । इससे अनेक मृत व्यक्तियों के परिवार वालों का पालन पोषण करने वाला कोई नहीं बचता है । मुनाफाखोरी की इस समाज विरोधी प्रवृत्ति पर अंकुश लगाने के लिए सरकार की तरफ से देशव्यापी प्रयास किए जा रहे हैं । पिछले कुछ वर्षों में मुनाफाखोरी की प्रवृत्ति कम होने के बजाय और बढ़ी है । इसीलिए खाद्य मिलावट कानून के कुछ उपबंधों का उल्लंघन करने वालों को दंडित करने का प्रावधान और कड़ा कर दिया गया है । मिलावट के ऐसे मामलों में, जो उपभोक्ताओं को गम्भीर क्षति पहुंचा सकते हैं, आजीवन कारावास तक के दण्ड की व्यवस्था है । जीवित रहने के लिए भोजन आदमी की एक मूलभूत आवश्यकता है । हमारे देश में जहां 37 प्रतिशत से भी अधिक लोग गरीबी रेखा के नीचे जीवन व्यतीत करते हैं, यह सुनिश्चित करना जरुरी है कि जिन खाद्य वस्तुओं का हम सेवन करते हैं, उनमें किसी प्रकार की मिलावट नहीं होनी चाहिए । मिलावट की इस खतरनाक बीमारी से लड़ने के लिए केवल सरकारी कानूनों के भरोसे बैठे रहना ठीक नहीं है । इसके निवारण के लिए देश में एक जबर्दस्त उपभोक्ता आन्दोलन चलाने की जरूरत है । गांवों में अशिक्षा के कारण आम तौर पर लोगों को, इस सम्बन्ध में बने कानूनों की जानकारी नहीं है । इसलिए प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों पर काम करने वाले कार्मिकों, स्वयंसेवी संगठनों तथा प्रचार माध्यमों के जरिए ग्रामीणों में जागरुकता पैदा करना आवश्यक है, जिससे उनमें उपभोक्ता संरक्षण, खाद्य स्वच्छता, खाद्य सुरक्षा, लेबल व्यवस्था और खाद्य पदार्थों में मिलावट के सम्बन्ध में पर्याप्त जानकारी मिल सके ।

स्वयंसेवी संगठनों का योगदान आवश्यक

ग्रामीण स्वास्थ्य व्यवस्था को कारगर बनाने में स्वयंसेवी संगठनों का महत्वपूर्ण योगदान हो सकता है, लेकिन इसमें इस बात का विशेष ध्यान रखना होगा कि सरकार काफी छानबीन करके इसके लिए ऐसे संगठनों का चयन करे जिनके अन्दर सचमुच ही सेवा की भावना हो । स्वयंसेवी संगठनों के नाम पर अनुदान लेकर आम लोगों के स्वास्थ्य के साथ खिलवाड़ करने वालों को इसमें कोई जगह नहीं होनी चाहिए ।

स्वास्थ्य सेवाओं को बढ़ावा देने के लिए सरकार ने भी स्वयंसेवी संगठनों के महत्व को स्वीकार किया है । स्वयंसेवी संगठनों को उन परियोजनाओं के लिए केन्द्र से अनुदान भी मंजूर किये जाते हैं । इनके अन्तर्गत मातृ-शिशु स्वास्थ्य, रोगों से रक्षा तथा जनसंख्या शिक्षा सहित परिवार कल्याण सेवाओं में शामिल परियोजनाओं के लिए वित्तीय सहायता दी जाती है । आठवीं योजना में स्वयंसेवी संगठनों को अनुदान देने के लिए, नई और प्रयोगात्मक स्कीम को जारी रखने का प्रस्ताव है ।

इस प्रकार गांवों में स्वास्थ्य के प्रति जागरुकता, जनशिक्षा, उपभोक्ता आन्दोलन पर्यावरण के प्रति चेतना तथा प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों और स्वयंसेवी संगठनों को अधिकाधिक सक्रिय बनाकर हम ग्रामीण स्वास्थ्य को कारगर और उपयोगी बना सकते हैं ।

स्टाफ क्वार्टर नम्बर- 19,
नार्थ एवेन्यु, नई दिल्ली- 110 001

ग्रामीण स्वास्थ्य सेवा में अग्रणी राजस्थान

बलवन्त सिंह हाड़ा

राजस्थान भारत की वह पुण्य भूमि है जिसका इतिहास तीर तलवारों से लिखा है, धधकती अग्नि ज्वालाओं में सर्वस्व का होम करने वाली अखण्ड सौभाग्यवती पद्मनियाँ और केसरिया कसूमल परिधानों वाले, गले में तुलसी माला तथा शीश पर शालिग्राम धारण किए, मातृ-भूमि की रक्षा में प्राणोत्सर्ग करते हुए, उन करोड़ों भूमि पुत्रों की जिन्होंने इस माटी को चन्दन का स्तर दिया, वहीं यहाँ के साहसी, परिश्रमी एवं जुझारु निवासियों ने निरन्तर पड़ते अकाल से जूझते हुए भी अपनी संस्कृति की पहचान बनाये रखी है । सदियों तक विदेशी आततायियों, सामन्तवादियों की दोहरी गुलामी की चक्की में पिसते हुए भी अपने कठिन परिश्रम से राज्य में नव निर्माण किया है ।

राज्य का अधिकांश क्षेत्र मरुस्थली अथवा अनावृष्टि का क्षेत्र है परन्तु कहीं भागीरथी प्रयत्नों की कहानी कहती चम्बल, इन्दिरा गाँधी नहर से सिंचित उपजाऊ क्षेत्र अपनी प्राकृतिक छटा से लोगों के मन को मोह रहा है । यहाँ के पर्यटन स्थल जैसे जैसलमेर की हवेलियाँ, माऊन्ट आबू, देलवाड़ा के मन्दिर, रणकपुर के जैन मंदिर, उदयपुर की झीलें, किले, महल और कोटा झालावाड़ की चित्रकारी सैलानियों को मंत्रमुग्ध कर देती है ।

सामंती दासता से दबा स्वतंत्रता प्राप्ति से पूर्व उजड़ा, पिछड़ा राजस्थान बीस सूत्रीय कार्यक्रम सुचारू रूप से लागू करने में पूरे देश में दो बार प्रथम आ चुका है । चिकित्सा एवं स्वास्थ्य संबंधी उपलब्धियाँ इस प्रदेश के उज्ज्वल भविष्य की ओर संकेत करती हैं ।

चिकित्सा की वर्तमान व्यवस्था

राजस्थान में आज महल से झोपड़ी तक के निवासी को चिकित्सा सेवा उपलब्ध कराने हेतु राज्य में 187 चिकित्सालय, 101 सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र, 723 प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र, 712 औषधालय, 111 मातृ एवं शिशु कल्याण केन्द्र, 390 परिवार कल्याण केन्द्र, 13 लघु स्वास्थ्य केन्द्र (जन जाति क्षेत्र), 3061 आयुर्वेदिक चिकित्सालय एवं औषधालय, 80 होमियोपैथिक चिकित्सालय, 74 यूनानी चिकित्सालय, 3 प्राकृतिक चिकित्सालय तथा 5 चल चिकित्सालय भिन्न-भिन्न स्थानों पर शिविर लगाकर अपनी सेवायें देते हैं ।

गांवों की स्वास्थ्य एवं चिकित्सा सेवा में सुधार लाने हेतु सरकार निरन्तर प्रयत्नशील है । गाँव के गरीब को, पंक्ति के आखरी आदमी को खाने को ढंग की रोटी, पहनने को कपड़ा और रहने को मकान मिले । मुख्यमंत्री ने घोषणा की है कि सरकारी खजाने पर पहला हक गरीब का होगा, निर्धन व्यक्ति हमारी योजनाओं का पहला पात्र है । वह गणेश जी की तरह प्रथम वंदनीय है । सरकार ग्रामीण जनसंख्या को "पहला सुख निरोगी काया" की पुरानी कहावत को व्यावहारिक रूप देती जा रही है । श्रुति ने कहा है कि, "धर्म, अर्थ, काम मोक्षांणा आरोग्य मूल उत्तमम्" महाकवि कालीदास ने अपने महाकाव्य "रघुवंश" की रचना करते हुए लिखा है कि "शरीरमाद्यम खलु धर्मसाधनम्" अर्थात् हम जीवन के किसी भी क्षेत्र में प्रगति और उन्नति करना चाहें तो उन उत्कर्ष और अभ्युदय के लिए स्वस्थ शरीर होना अत्यन्त आवश्यक है । स्वस्थ शरीर साधन के द्वारा ही हम समाज के किसी भी कार्य-क्षेत्र में प्रगति के चरम शिखर पर पहुँच सकते हैं ।

व्यक्तिगत स्वास्थ्य की आवश्यकता

प्रत्येक व्यक्ति को स्वाभाविक आकांक्षा रहती है कि वह स्वस्थ रहे, सुन्दर, सुडौल, सशक्त बना रहे, कभी रोगी न हो एवं सदा सुखपूर्वक जीवनयापन करता रहे ।

व्यक्तिगत स्वास्थ्य संवर्धन के लिए व्यक्ति को अपनी स्वास्थ्य एवं शारीरिक क्रिया सम्बन्धी आवश्यकताओं की पूर्ति करनी होती है । वे आवश्यकतायें हैं— शुद्ध वायु, शुद्ध जल, शुद्ध सात्विक सन्तुलित आहार, शारीरिक स्वच्छता, शारीरिक परिश्रम-व्यायाम, नियमित निद्रा, शारीरिक संरक्षण, संक्रामक रोगों, दुर्घटनाओं एवं व्यावसायिक आपदाओं से बचाव, ज्ञानेन्द्रियां

आँख, नाक, कान, त्वचा, जिह्वा आदि का संरक्षण, मानसिक सन्तुलन, कतिपय सामाजिक कुरीतियों का त्याग व स्वच्छ पर्यावरण ।

गांवों की पेयजल समस्या

वायु प्रदूषण शहरों की अपेक्षा गांवों में बहुत कम है लेकिन शुद्ध स्वच्छ जल का अभाव राज्य के 34,968 गांवों में से 24037 गांवों में माना गया है, इस वर्ष वर्षा की कमी से अभी से पीने के पानी का संकट गांवों में गहराने लगा है, भू-जल का स्तर नीचा होने लगा है । शुद्ध जल के अभाव में मनुष्यों और पशुओं को गन्दा जल पीना पड़ता है, नारु और अनेक बीमारियों का कारण अशुद्ध जल है । अनेक गाँवों में कोसों दूर से ऊँट, बैलगाड़ियों से जल लाना पड़ता है, वहाँ नहाना तो बड़ा सवाल है, कई गांवों में महिलायें-पुरुष स्नान खाट पर बैठकर करते हैं, नीचे गिरे पानी से दूसरे काम व पशुओं को पिलाते हैं । मारवाड़ में आपको घी पीने को आसानी से मिल सकता है लेकिन एक लोटा पानी मुश्किल से मिलेगा ।

समस्या के समाधान हेतु प्रयास

राजस्थान सरकार ने प्रारम्भ से ही इस पेयजल समस्या के समाधान के लिए पर्याप्त वित्तीय साधन केन्द्रीय सरकार के सहयोग से जुटाये । पंचवर्षीय योजनाओं के अन्तर्गत भी पेयजल व्यवस्था से लाभान्वित गांव निम्न तालिका से स्पष्ट है–

–योजनाओं से लाभान्वित गाँव–

क्रम सं०	पेयजल स्रोत	लाभान्वित गांवों की संख्या
1.	हैण्ड पम्प योजना	21,721
2.	पनघट योजना	1,373
3.	पाइप जल योजना	1,845
4.	डिग्गी एवं क्षेत्रीय जल प्रदाय योजना	5,984
	कुल	30,923

तालिका से स्पष्ट है कि ग्रामीण क्षेत्रों में विभिन्न स्रोतों के माध्यम से पेयजल की व्यवस्था की गयी । इन योजनाओं का लाभ भी मिला । हैण्ड पम्पों के माध्यम से पेयजल की व्यवस्था में बड़ी संख्या में गांवों ने लाभ प्राप्त किया । राजस्थान में ग्रामीण पेयजल की व्यवस्था की दृष्टि से इन्दिरा गांधी नहर योजना का भी महत्वपूर्ण स्थान है । राजस्थान की गंगा नाम से विख्यात इस नहर के माध्यम से इतनी ही भूमि में पेयजल की व्यवस्था भी नहर के माध्यम से की गई है । इसके अतिरिक्त कई स्थानों पर फिल्टर प्लान्ट लगाकर नहर के पानी को पीने के योग्य बनाकर पेयजल की व्यवस्था उस सूखे मरुस्थल में की है ।

इतना सब कुछ होते हुए भी राजस्थान में अनावृष्टि के कारण अनेक गांव पेयजल के अभाव का संकट झेल रहे हैं । हमारी आठवीं पंचवर्षीय योजना में भी इस क्षेत्र के लिए स्थाई पेयजल व्यवस्था हेतु विशेष योजनाएं निर्धारित लक्ष्य अनुसार प्रारम्भ हुई हैं ।

ग्रामीण आवास समस्या का समाधान

मनुष्य की तीन बुनियादी आवश्यकताओं में भोजन तथा वस्त्र के बाद आवास का स्थान है । हम प्रत्येक ग्रामीण को आवास उपलब्ध कराने की बात करते हैं परन्तु हमारे नीति-नियामक एक गल्ती हमेशा करते रहे हैं कि वे ग्रामीण और शहरी विकास समस्या को दो अलग-अलग समस्याएं मानते रहे और शहरी आवास की ओर अधिक ध्यान देते हैं जबकि ग्रामीण क्षेत्रों में ठीक आवास व्यवस्था न होने से लोगों को अस्वस्थ एवं असुरक्षित अवस्था में रहना पड़ रहा है । शहर एवं ग्रामीण आवास व्यवस्था एक सिक्के के दो पहलू हैं और अपनी जगह दोनों जरुरी हैं ।

राज्य सरकार ने राजस्थान पंचायत एवं न्याय पंचायत सामान्य नियम 1961 के नियम 267(1) व (2) के तहत 150 वर्ग गज भूमि आर्थिक दृष्टि से कमजोर परिवारों को निःशुल्क आवंटन का निर्णय लिया उसके तहत वर्ष 1990 तक 23,58,644 भूखण्ड आवंटित कर दिये हैं । वर्ष 1990-91 में इस योजना के अन्तर्गत 30,533 निःशुल्क भूखण्ड आवंटित किये जा चुके हैं जो लक्ष्य का 101.7 प्रतिशत है ।

ग्रामीण आवासीय गृह निर्माण अनुदान योजना : 20 सूत्रीय कार्यक्रम के तहत इन्दिरा आवास योजना सूत्र संख्या 14 के अन्तर्गत 1986 से क्रियान्वित की जा रही है तथा 1990 के अन्त तक लगभग 28,616 भवन बनवाकर निर्धनतम अनुसूचित जाति/जनजाति के परिवारों को उपलब्ध कराये जा चुके हैं । 1990-91 में 1,500 गृह निर्मित कराने के लक्ष्य के विपरीत जनवरी 1991 तक 3,540 आवास गृह निर्मित करवाकर निर्धनतम परिवारों को उपलब्ध कराए जा चुके हैं ।

इसके अलावा ग्रामीण आवासीय भवनों के निर्माण हेतु राज्य सरकार ऋण/अनुदान उपलब्ध कराती है। जिसमें व्यावसायिक बैंकों, हुडको, एल०आई०सी०/जी०आई०सी० एवं माडा/टी०एस०पी०/सहरिया योजनाएँ आदि हैं। इनके माध्यम से भी चालू वर्ष में 3246 भवन निर्मित कराये जा चुके हैं।

पोषाहार कार्यक्रम एवं संतुलित आहार

हम रोज जो भोजन लेते हैं उसमें पूरे पोषक तत्व हैं या नहीं इसकी जानकारी होना जरुरी है यदि आहार में पोषक तत्वों की मात्रा कम होती है तो शरीर में ऊर्जा की कमी हो जाती है साथ ही शरीर का विकास धीमी गति से होता है तथा शरीर रोगग्रस्त हो जाता है, यही कारण है कि हर आयु वर्ग के लोगों को संतुलित आहार का सेवन करना चाहिए। देखा गया है कि महिलाएं जो गांवों में भोजन बनाती हैं उन्हें न तो खाने का पता होता है और न यह मालूम होता है कि क्या खाने से स्वास्थ्य पर अच्छा प्रभाव पड़ सकता है। उन्हें यह भी मालूम नहीं होता कि अमुक खाना कैसे पकाना और खाना चाहिए।

संतुलित आहार का सम्बन्ध गरीब या अमीर से नहीं है। सच तो यह है कि हममें से अधिकांश लोग यह जानते ही नहीं कि प्रतिदिन की खाने-पीने की चीजों में कितने पौष्टिक तत्व होते हैं।

एक सामान्य ग्रामीण कृषक को संतुलित आहार के लिए किस प्रकार के कितने खाद्य पदार्थ की आवश्यकता होती है यह जानना भी जरुरी है इसके साथ ही शारीरिक परिश्रम करने वाले को अतिरिक्त ऊर्जा प्राप्त करने हेतु अधिक पोषक तत्व वाले आहार की आवश्यकता होगी। बच्चों, किशोरों, महिलाओं, गर्भवती स्त्रियों व शिशुओं को दुग्धपान कराने वाली स्त्रियों को अधिक मात्रा में पोषक तत्वों की आवश्यकता पड़ती है। ग्रामीण क्षेत्रों में स्थानीय सस्ते व पोषक पदार्थों को प्राथमिकता देनी चाहिए।

राजस्थान में निम्नलिखित योजनायें चल रही हैं :

मध्यान्ह पोषाहार कार्यक्रम :- राजस्थान के चयनित 13 जिलों, 54 पंचायत समितियों में मध्यान्ह पोषाहार व्यवस्था प्रारम्भ की गई, इस कार्यक्रम में प्राथमिक शालाओं के 4 लाख 45 हजार छात्र-छात्राओं को मध्यान्ह पोषाहार लाभ दिया गया। खाद्य सामग्री केयर संस्था के माध्यम से सुलभ हुई। अकाल की अवधि में राज्य के प्रभावित जिलों में 6 वर्ष की आयु तक के सभी बालकों, गर्भवती महिलाओं और धात्री माताओं के लिए विशेष पोषाहार कार्यक्रम से 7.5 लाख लोगों को लाभान्वित किया जा चुका है। उन्हें पका-पकाया पौष्टिक भोजन करवाया गया।

ग्रामीण शौचालय समस्या-समाधान

गांवों में शौच की व्यवस्था ठीक न होने से बहुत गन्दगी रहती है, लोग खेतों-रास्तों के किनारे शौच जाते हैं। महिलाओं को तो बहुत दूर नदी अथवा नाले पर जाना पड़ता है। राज्य सरकार ने ग्रामों में शौचालय का निर्माण कार्य प्रारम्भ किया है। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत देय अनुदान सहायता के साथ-साथ भारत सरकार की केन्द्रीय ग्रामीण स्वच्छता कार्यक्रम (सी०आर०एस०पी०) के तहत सातवीं योजना के तहत मार्च 1989 तक 22,857 ग्रामीण शौचालय निर्मित हो चुके हैं।

स्वास्थ्य मार्ग-दर्शक योजना

इस योजना के अन्तर्गत एक हजार की जनसंख्या पर स्थानीय व्यक्तियों में से एक स्वास्थ्य मार्गदर्शक का चयन किया जाता है जिसे आवश्यक प्रशिक्षण देकर अपने क्षेत्र में स्वास्थ्य सम्बन्धी सहायता देने तथा सामान्य प्रकार की साधारण दवाइयां निःशुल्क वितरण करने का कार्य दिया जाता है। कुओं में दवा डालना, टीकाकरण के लिए गांवों में जानकारी देना तथा परिवार कल्याण कार्यक्रम में लोगों को प्रेरित करना भी उनका दायित्व होता है।

उन्नत चूल्हा कार्यक्रम

जलाऊ लकड़ी की बचत व खाने पकाने वाली महिला पर धुएं से पड़ने वाले कुप्रभाव से बचाव के साथ, खाना पकाने की पर्याप्त ऊर्जा का सही उपयोग भी योजना का मुख्य उद्देश्य है। यह शत-प्रतिशत केन्द्रीय प्रवर्तित योजना है। भारत सरकार के ऊर्जा मंत्रालय के अपारम्परिक ऊर्जा स्रोत विभाग द्वारा यह कार्यक्रम प्रारम्भ किया गया है। यह योजना पूरे राज्य के सभी जिलों में चलाई जा रही है। ग्रामीण जनता ने इसके लाभ को समझते हुए बहुत उत्साह के साथ इसे स्वीकार किया है। इसके लिए प्रत्येक जिले में ग्राम सेवकों, ग्रामीण महिलाओं को प्रशिक्षण दिया जाता रहा है। वर्ष 1990-91 में 1,45,000 उन्नत चूल्हे बनाये गये। विभाग ने उन्नत चूल्हों की जानकारी लोगों को देने हेतु बड़े-बड़े मेलों जैसे पुष्कर, कोटा, चन्द्रभाग आदि में प्रदर्शन करवाया जिसे लाखों व्यक्तियों ने देखा व सराहा। इसकी लोकप्रियता का उदाहरण यह है कि एक ग्रामीण ने अपनी बेटी का रिश्ता तय करते समय लड़के वालों से यह पूछा,

"आपके घर में खाना उन्नत चूल्हे पर बनता है कि नहीं ? क्योंकि मेरी बेटी धुएँ भरे वातावरण में चूल्हा फूँक कर खाना नहीं बनायेगी ।"

नारू रोग की समस्या एवं समाधान

नारु रोग के कीटाणु पानी के साथ मनुष्य के पेट में चले जाते हैं और लार्वा विकसित होने लगता है । प्रायः 8 से 10 माह बाद शरीर के किसी अंग पर दो-तीन फुट लम्बे सफेद धागे की तरह बहुत पीड़ा देते हुए निकलता है । इस रोग से पीड़ित होने पर ग्रामीणों को कृषि में बाधा आती है । सर्वेक्षण के आधार पर मध्य प्रदेश और राजस्थान में इसके अधिक रोगी पाये गये हैं । अकेले राजस्थान में ही रोगियों की संख्या 60 हजार 590 है । राज्य के 30 जिलों में से 26 जिलों में नारु रोग का प्रकोप है ।

इसकी रोकथाम हेतु राजस्थान सरकार और यूनीसेफ की सहायता से नारु उन्मूलन कार्यक्रम आयोजित किया गया है जिसके तहत सारे सीढ़ीनुमा कुएं-बावड़ियों की सीढ़ियाँ बन्द की जा रही हैं । 2700 कुओं को बदला जा चुका है । पानी छानकर पीने हेतु दोहरी परत की छलनियाँ 1,20,000 परिवारों को वितरित की गई हैं । उन क्षेत्रों में हैण्डपम्प लगाए गये हैं । लोगों को इस रोग की जानकारी देने हेतु प्रदर्शनियाँ लगी हैं ।

ग्रामीण स्वास्थ्य पर कुप्रभाव डालने वाले घटक

(1) **नशा :** गाँवों में शराब पीने का अधिक रिवाज है । तम्बाकू तो ग्रामीण छोड़ते ही नहीं, जहाँ बैठे दो जने हुक्का या बीड़ी सुलग जाती है । इनसे क्षय, फेफड़े के अनेक रोग, खांसी, कैंसर तक हो जाते हैं ।

(2) **बाल विवाह :** गाँवों में कम आयु में विवाह कर दिया जाता है, छोटे-छोटे बालक शादी का महत्व ही नहीं जानते लेकिन उनके माँ बाप उनको गोदी में लेकर फेरे दिला देते हैं । सरकार ने यद्यपि बाल-विवाह विरोधी कानून बना रखा है ।

(3) **अंधविश्वास :** गाँवों में अंधविश्वास और पुरानी रूढ़िवादिता अधिक है । बीमार होने पर इलाज न करा कर, जादू टोनों पर विश्वास कर बीमारी को बहुत अधिक बढ़ा देते हैं ।

(4) **प्रसव की समस्या :** अनेक गांवों में दाई नहीं हैं जहाँ है वहाँ भी ग्रामीण नासमझी के कारण देशी दाइयों से प्रसव करवाते हैं जिससे जच्चा व बच्चा को अनेक बार जान से हाथ धोना पड़ता है ।

(5) **पर्दा, सागड़ी (बन्धक) प्रथा :** आज भी गांवों में महिलाओं को घूंघट में रहना पड़ता है । शुद्ध वातावरण में नहीं निकलने दिया जाता, कई परिवार बन्धक रहते हैं उन्हें रूखा-सूखा भोजन व वस्त्र मालिक जैसा देता है ले लेते हैं, बीमार पड़ने पर उचित चिकित्सा नहीं होती है । राज्य सरकार ने बन्धक निवारण कानून बनाया है । हजारों बन्धकों को मुक्त कराकर, नया रोजगार देकर नया जीवन दिया है, परन्तु अभी बहुत कुछ करना शेष है ।

जनसंख्या की बाढ़

राजस्थान की जनसंख्या बहुत तेजी से बढ़ती जा रही है सन् 1951 में यह 160 लाख थी । वहीं 1971 में 258 लाख, 1981 में 342 लाख तथा 1991 में 438 लाख 80 हजार 640 (43,880,640) आंकी गई । 1981 से 91 के दशक में 96 लाख की वृद्धि हुई है । हमारी प्रगति व उत्पादन उसका मुकाबला करने में असमर्थ होते जा रहे हैं । कोई योजना, कोई भी क्रान्ति जनसंख्या की बाढ़ में बह जाती है । राजस्थान में जनसंख्या वृद्धि पर अभी तक समुचित नियंत्रण नहीं हो पाया है । अशिक्षा के कारण परिवार कल्याण के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण पैदा नहीं हो पा रहा है । लोग बच्चों को ईश्वर की देन मानते हैं । केवल दो बच्चों के परिवार के लक्ष्य की प्राप्ति हेतु (i) बंध्याकरण (ii) आई०यू०डी० लगाने (iii) गर्भ निरोधक गोलियों का प्रयोग द्वारा गर्भ निरोध के लक्ष्य निर्धारित किए जा चुके हैं । गाँव-कस्बों में परिवार कल्याण शिविर आयोजित कर लक्ष्य की पूर्ति की जा रही है ।

सरकार व जनता के लक्ष्य (उद्देश्य) एक हैं । यदि हम सरकार से अपेक्षा ही करते रहे तथा सहयोग के समय उसे "पराया" समझे तो हम वास्तव में अपने लक्ष्यों के साथ अन्याय ही करेंगे । जॉन्स एफ० कैनेडी ने अमरीका के राष्ट्रपति बनते ही वहाँ की जनता से कहा :– "आप यह मत पूछिये कि देश आपके लिए क्या कर सकता है, वरन् यह पूछिये कि आप देश के लिए क्या कर सकते हैं ।"

यदि सचमुच ईमानदारी से जन प्रतिनिधियों, कर्मचारियों ने ग्रामीण स्वास्थ्य योजनाओं को चलाया तो निश्चय ही हमारे नरक बने गांव स्वर्ग बन जायेंगे ।

लाल की हवेली
झालावाड़- 326001 (राजस्थान)

परिवार कल्याण एवं ग्रामीण विकास

गणेश कुमार पाठक

किसी परियार का सुखी एवं सफल होना बहुत कुछ उस परिवार के सदस्यों के स्वास्थ्य पर निर्भर करता है। स्वस्थ व्यक्ति में एक अस्वस्थ व्यक्ति की अपेक्षा जीवन को सुखी, सफल एवं सार्थक-बनाने की संभावनाएं अपेक्षाकृत अधिक होती है क्योंकि स्वास्थ्य ही व्यक्ति की प्रगति का आधार होता है। यह बात न केवल व्यक्ति या परिवार के लिए, अपितु देश के लिए भी सही चरितार्थ होती है। जिस देश के नागरिक स्वस्थ होंगे, वह देश निरंतर प्रगति को प्राप्त होगा। अतः प्रत्येक कल्याणकारी देश का यह प्रयत्न रहता है कि उसके नागरिक स्वस्थ रहें एवं इसके अन्तर्गत सम्मिलित सभी राज्य सरकारों ने अपने नागरिकों के स्वास्थ्य की रक्षा, रोगों से बचाव एवं उपचार तथा स्वास्थ्य की उन्नति के लिए सेवाओं का संगठन किया है। इन स्वास्थ्य सेवाओं का संगठन इस तरह किया गया है कि देश सभी वर्गों के नागरिकों को उनकी आवश्यकतानुसार ये सेवाएं प्राप्त हो सकें।

परिवार कल्याण कार्यक्रम को सफल बनाने के लिए जिन सेवाओं का संगठन किया गया, उनमें से मुख्य इस प्रकार हैं-

मातृ एवं शिशु स्वास्थ्य सेवाएं

भारत की सम्पूर्ण जनसंख्या में बालकों का वर्ग विशाल एवं स्वास्थ्य सेवाओं की दृष्टि से एक महत्वपूर्ण वर्ग है। देश में 15 वर्ष से कम आयु के बालक कुल जनसंख्या के 43 प्रतिशत हैं। इस वर्ग में विशेष ध्यान देने योग्य तथ्य हैं शारीरिक वृद्धि, मानसिक विकास एवं बौद्धिक विकास। माताओं का वर्ग जिसमें 15 से 44 वर्ष की स्त्रियां आती हैं, कुल जनसंख्या का 22 प्रतिशत है। इस तरह यह दोनों वर्ग कुल जनसंख्या का 65 प्रतिशत है। इस विशिष्ट वर्ग को स्वास्थ्य सेवाएं प्रदान करने से दोहरा लाभ प्राप्त होता है। एक तरफ से तिहाई जनसंख्या को स्वास्थ्य सेवाएं मिल जाती हैं एवं दूसरी तरफ, इनकी विशेष स्वास्थ्य समस्याओं को दूर करने से स्वस्थ माता को स्वस्थ शिशु प्रदान किया जा सकता है एवं उन्हें स्वस्थ रखा जा सकता है। इसलिए इनसे संबंधी स्वास्थ्य सेवाओं के लिए 'मातृ एवं शिशु स्वास्थ्य' सेवाएं संगठित की गई हैं।

मातृ एवं शिशु, स्वास्थ्य सेवाओं के अन्तर्गत मुख्य रूप से गर्भवती स्त्रियां दूध पिलाने वाली माताएं, शिशु एवं 15 वर्ष तक के बालक आते हैं "विश्व स्वास्थ्य संगठन" द्वारा मातृ एवं स्वास्थ्य कल्याण सेवाओं के लिए जो ध्येय निर्धारित किए गए हैं, वे इस प्रकार हैं : इस बात की पुष्टि करना कि प्रत्येक गर्भवती स्त्री एवं दूध पिलाने वाली माता स्वस्थ रहे, उसे शिशु के लालन-पालन की जानकारी हो, जिससे प्रसव सामान्य हो एवं स्वस्थ संतान पैदा करें अर्थात् इसके अन्तर्गत गर्भवती की देखभाल, सुरक्षित प्रसव, माँ तथा नवजात शिशु की देखभाल करना आदि कार्यक्रम सम्मिलित हों, किन्तु विस्तृत अर्थों में युवाओं को जो भविष्य के माता-पिता हैं, स्वास्थ्य की प्रगति एवं उन्हें पारिवारिक जीवन और समाज में परिवार के स्थान से परिचित कराना इसका मुख्य ध्येय हैं। इसके साथ मातृ-पितृ कला एवं संतान न होने से संबंधित कारणों का निराकरण करना भी इस कार्यक्रम का मुख्य ध्येय है।

बच्चों की सेवाओं का ध्येय है कि प्रत्येक बच्चा, परिवार की इकाई में स्नेह एवं सुरक्षा के स्वस्थ वातावरण में जीवित रहे एवं प्रगति करे। उन्हें समुचित एवं पर्याप्त भोजन प्राप्त हो। स्वास्थ्य की देखभाल एवं चिकित्सा सुविधाएं प्राप्त हो तथा बच्चे के स्वस्थ रहने के लिए आवश्यक बातों से उन्हें अवगत कराया जाये।

सामुदायिक विकास एवं ग्रामीण स्वास्थ्य सेवाएँ

ग्रामीण क्षेत्रों में मां एवं बच्चे के स्वास्थ्य की देखभाल सामुदायिक विकास के अन्तर्गत की जाती है। भारत सरकार द्वारा 1952 में सामुदायिक विकास कार्यक्रम प्रारम्भ किया गया जो बहुत समय तक समुदाय के स्वयं सक्रिय भाग लेने पर निर्भर करता है ? इस योजना में यद्यपि कृषि, स्वास्थ्य, आवास, शिक्षा, वातावरण की स्वच्छता, ग्रामीण रोजगार, लघु उद्योग आदि सम्मिलित हैं किन्तु जहाँ तक स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण से तात्पर्य है तो विकास कमी में स्वास्थ्य सेवाओं का बहुत बड़ा हाथ है। स्वास्थ्य की प्रोन्नति से अधिक कृषि उत्पादन एवं कृषि उत्पादन से स्वास्थ्य की प्रोन्नति होती है। इसी कारण विकास

खंड की ऐसी योजनाएं भी चलाई जा रही हैं जो कि स्वास्थ्य की उन्नति में सहायक होती हैं जैसे माताओं एवं बच्चों के लिए सम्मिलित कार्यक्रम, अतिरिक्त पोषण कार्यक्रम, परिशिष्ट पोषण कार्यक्रम, समन्वित बाल विकास योजना आदि ।

ग्रामीण स्वास्थ्य संगठन

प्रायः प्रत्येक विकास खण्ड में एक प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र एवं 8-10 उपकेन्द्र होते हैं । इसके अतिरिक्त एलोपैथिक, यूनानी, आयुर्वेदिक डिस्पेंसरी आदि भी होती हैं । प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र अपने क्षेत्र में निम्नलिखित सेवाएं प्रदान करता है-

(1) चिकित्सा सुविधा (2) मातृ-शिशु कल्याण एवं परिवार कल्याण (3) वातावरण की स्वच्छता जिसमें कुछ पेयजल एवं शोचालयों की व्यवस्था (4) विद्यालय स्वास्थ्य सेवा (5) संक्रमक रोगों की रोकथाम (6) जन्म, मृत्यु के आंकड़े एकत्र करना (7) स्वास्थ्य शिक्षा ।

इसके अतिरिक्त प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों के माध्यमों से मलेरिया उन्मूलन, क्षय रोग के रोगियों का घर पर इलाज का कार्य भी किया जाता है ।

प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों के माध्यम से निम्नलिखित पारिवारिक-मातृ-शिशु एवं परिवार कल्याण सेवाएं दी जाती हैं :

परिवार का स्वास्थ्य

परिवार के सर्वेक्षण के समय अथवा अन्य किसी भी स्थिति में संपर्क होने पर स्वास्थ्य की समस्या या विशेष रोगों की जानकारी मिलने पर प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र अथवा जिला चिकित्सालय को संदर्भित करना और आवश्यक सहायता देना सम्मिलित हैं ।

गर्भवती स्त्री की देखभाल

गर्भ की जानकारी होने से लेकर प्रसव होने तक की सेवाएं इसमें सम्मिलित हैं । इस अवधि में गर्भवती स्त्री के स्वास्थ्य की जांच, गर्भस्थ शिशु की दशा, मां को प्रसवकालीन तैयारी के संबंध में जानकारी देना, भोजन, व्यायाम स्वच्छता आदि के संबंध में ज्ञान कराना सम्मिलित हैं ।

प्रसवोत्तर कार्यक्रम

प्रसवोत्तर योजना परिवार कल्याण कार्यक्रम का एक बहुत ही सफल संघटक है । यह अस्पताल आधारित है एवं इसमें मुख्यतः प्रसूति सेवाएं प्रदान की जाती हैं । प्रसव के समय एक महिला आम तौर पर परिवार नियोजन का कोई न कोई तरीका अपनाने की बहुत आवश्यकता महसूस करती है ताकि आगे बच्चे की परेशानी न उठानी पड़े, इस कार्यक्रम के तहत ऐसी जरूरतमंद महिलाओं को आवश्यक सुविधाएं उपलब्ध कराई जाती हैं ।

शिशु की देखभाल

जन्म से लेकर एक वर्ष की आयु के बच्चों के स्वास्थ्य की देखभाल जिसमें बच्चों के स्वास्थ्य की जाँच, शारीरिक विकास, भोजन, बीमारियों से सुरक्षा हेतु टीका लगवाना आदि सम्मिलित हैं ।

बच्चों की देखभाल

एक से पांच वर्ष तक की आयु के बच्चों की देखभाल जिसमें बच्चों के स्वास्थ्य की जाँच, बीमारियों से बचाव के लिए आवश्यक टीका, भोजन आदि के लिए उचित सलाह सुविधा सम्मिलित है ।

परिवार नियोजन कार्यक्रम

परिवार कल्याण कार्यक्रम का सबसे महत्वपूर्ण पक्ष है, परिवार नियोजन, भारत विश्व का पहला देश है, जिसने परिवार नियोजन को एक राष्ट्रीय नीति के रूप में अपनाया । परिवार नियोजन को राष्ट्रीय विकास योजनाओं का एक अभिन्न अंग माना गया है । अपने देश में सर्वप्रथम 1952 में परिवार नियोजन का कार्यक्रम प्रारम्भ किया गया है और तब से प्रत्येक पंच वर्षीय योजनाओं में यह प्रमुख कार्यक्रम रहा ।

परिवार नियोजन से तात्पर्य है परिवार को नियोजित करना या सीमित रखना । परिवार से तात्पर्य है पति, पत्नी एवं उनके बच्चे । परिवार नियोजन का मतलब है कि विवाह के पश्चात् पति-पत्नी मिलकर आपस में सलाह मशविरा करके यह तय करें कि घर में कितने बच्चे होंगे, कब-कब होंगे एवं परिवार में कब और बच्चा नहीं चाहिए । बच्चों की संख्या दो तक सीमित रखी जाए तो अच्छा है । ऐसे परिवारों को "नियोजित परिवार" कहा गया है ।

दो बच्चों के मध्य समयान्तर की विधियों की जानकारी, परिवार नियोजन हेतु आवश्यक औषधि, उपकरण, आपरेशन की सुविधा कब और कहाँ प्राप्त होती है, इसकी जानकारी और सुविधा प्रदान कराना इस कार्यक्रम का मुख्य ध्येय है ।

वर्तमान समय में परिवार नियोजन हेतु अनेक कारगर उपाय किए जा रहे हैं। जैसे सुरक्षित काल का पालन एवं गर्भ निरोधक गोली आदि।

उपयुक्त वर्णित अस्थाई तरीके बच्चों के जन्म में अन्तर लाने के लिए बहुत ही उपयुक्त है, किन्तु जिन लोगों को स्थाई तरीका अपनाना हो उनके लिए नसबन्दी (बंध्याकरण आपरेशन) सबसे उपयुक्त तरीका है, इसके अन्तर्गत पुरुष एवं स्त्री दोनों में से किसी एक की नसबंदी की जा सकती है।

परिवार कल्याण कार्यक्रम की उपर्युक्त योजनाओं को क्रियान्वित करने हेतु देश भर में प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों एवं उपकेन्द्रों का जाल बिछा दिया गया है। एक लाख की आबादी के पीछे एक प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र एवं 5,000 की आबादी के पीछे एक उपकेन्द्र खोला गया है। पहाड़ी एवं दुर्गम क्षेत्रों में एक उपकेन्द्र 3000 की आबादी को, स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण की सेवाएं उपलब्ध कराता है।

वर्तमान समय में, देश में कुल 8,000 से भी अधिक प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र हैं जो लोगों को स्वास्थ्य संबंधी हर प्रकार की सेवाएं एवं सुविधाएं उपलब्ध करा रहे हैं। उपकेन्द्रों की कुल संख्या 80,000 से ऊपर है, जो 1991 के अन्त तक 1,20,000 हो जाने की आशा है, ये उपकेन्द्र लोगों की स्वास्थ्य संबंधी प्राथमिक आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं। प्रत्येक उपकेन्द्र में एक पुरुष एवं एक महिला स्वास्थ्य कार्यकर्त्ता कार्य करते हैं।

परिवार कल्याण कार्यक्रम की एक महत्वपूर्ण योजना

समाज द्वारा समाज में से ही चयन किए गए स्वयं सेवी कार्यकर्त्ताओं का एक कैडर तैयार करने हेतु देश में 2 अक्तूबर, 1977 को एक 'स्वास्थ्य गाइड योजना' (जिसे पहले जन स्वास्थ्य रक्षक कहा जाता था) चलाई गई थी। 'स्वास्थ्य गाइड' को स्वास्थ्य संवर्धक रोग निवारक एवं प्रारंभिक स्वास्थ्य संबंधी प्रशिक्षण दिया जाता है ताकि वह गांव के स्तर पर लोगों को मिली जुली प्राथमिक स्वास्थ्य सेवाएं प्रदान कर सकें। प्रशिक्षण की अवधि तीन महीने तक की होती है। यह प्रशिक्षण नजदीक के स्वास्थ्य प्रशिक्षण केन्द्र, उपकेन्द्र पर दिया जाता है। एक गांव या 1,000 की आबादी के लिए एक प्रशिक्षित स्वास्थ्य गाइड एवं एक प्रशिक्षित दाई की व्यवस्था करने का लक्ष्य रखा गया है। अब तक 4,50,000 से ऊपर ग्रामीण स्वास्थ्य गाइड एवं 6,00,000 दाइयों को प्रशिक्षित किया जा चुका है और वे अपने-अपने गांवों में काम प्रारम्भ कर चुके हैं। इस योजना का मुख्य उद्देश्य "लोगों का स्वास्थ्य लोगों के अपने हाथ है"। यह योजना सन् 2000 तक सभी के लिए स्वास्थ्य के लक्ष्य को पूरा करने के उद्देश्य से प्रारम्भ की गई है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि परिवार कल्याण कार्यक्रम के तहत भारत में जनसंख्या नियंत्रण एवं लोगों को पूर्णतया स्वस्थ रखने हेतु विभिन्न योजनाओं के तहत प्रयास किया जाता रहा है। इन प्रयासों को उस समय अंतर्राष्ट्रीय मान्यता प्राप्त हुई, जब 30 सितम्बर, 1983 को न्यूयार्क में एक विशेष समारोह में स्वर्गीया प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी को संयुक्त राष्ट्र जनसंख्या पुरस्कार से सम्मानित किया गया था। इस अवसर पर श्रीमती गांधी ने कहा था कि "यह सम्मान विशेष कर मुझे या भारत सरकार को नहीं मिला है, अपितु इसका श्रेय परिवार नियोजन में जुटे हजारों कार्यकर्ताओं एवं लाखों युवा माता-पिता को जाता है, जो स्वेच्छा से अपने परिवार-नियोजित कर रहे हैं"। आज आवश्यकता इस चेतना को और जगाने की है।

द्वारा : प्रतिभा प्रकाशन
बलिया- 277 001
उत्तर प्रदेश

ग्रामीण क्षेत्रों में स्वास्थ्य की समस्या समाधान असंभव नहीं

धर्मेन्द्र त्यागी

मनुष्य-जीवन की प्राथमिक आवश्यकताओं में स्वास्थ्य का प्रमुख स्थान है। हमारे शास्त्रों में भी स्वास्थ्य की महिमा को महत्ता प्रदान की गई है। मनुष्य के सुखी जीवन की सार्थकता उसके स्वास्थ्य में निहित मानी गई है। कहा गया है– तन स्वस्थ तो मन स्वस्थ। तन और मन में अटूट पारस्परिकता है। तन स्वस्थ होगा तो मन भी स्वस्थ होगा और मन स्वस्थ होगा तो हमारा परिवार, देश और विश्व स्वस्थ होगा और ऐसा होगा तो सब प्रेमपूर्वक, सुखी और आत्मिक एकात्मता-संपन्न जीवन व्यतीत करेंगे लेकिन ऐसा होता नहीं, ऐसा है नहीं, इसलिए यत्र-तत्र-सर्वत्र तरह-तरह के विकारों के अम्बार लगे हैं।

मनुष्य शहर में रहे अथवा गांव में, स्वस्थ तन सर्वत्र उसकी प्राथमिक आवश्यकता होता है किंतु विडंबना है कि बच्चों से लेकर बूढ़ों तक भांति-भांति की व्याधियों से आज का मानव घिरा हुआ है और अधिक चिन्ता की बात तो यह है कि उसकी रोग-निरोधक क्षमता में निरंतरता से गिरावट आ रही है। ग्रामीण क्षेत्रों में यह समस्या और भी जटिल हो गई है, क्योंकि इन क्षेत्रों के लोगों में इस सम्बन्ध में आवश्यक शिक्षा और जागरुकता का पर्याप्त अभाव तो है ही, अधिकांश स्थानों पर रूढ़िवादी कट्टरताएं इतनी भयावह हैं कि उनमें वर्तमान चिकित्सा व्यवस्था के प्रति मोह की स्थिति ही उत्पन्न नहीं हो रही है। ऐसे इलाके मुख्यतः आदिवासी बहुल क्षेत्रों में हैं। इन क्षेत्रों में सरकार और कुछ सामाजिक संगठन शिक्षा का विकास-विस्तार करने में संकल्प के साथ जुटे भी हैं तथापि इनकी रुढ़िवादी कट्टर मान्यताओं से इन्हें निजात दिलाने में अभी न जाने कितने वर्ष लग जाएंगे।

यहाँ हमें जान लेना आवश्यक होगा कि हमारा देश मुख्यतः ग्राम-आधारित है अर्थात् देश में गांवों की संख्या सर्वाधिक है और देश की कुल जनसंख्या का लगभग 77 प्रतिशत भाग इन्हीं 5,75,936 से अधिक गांवों में रहता है। देश की कुल जनसंख्या इस समय लगभग 85 करोड़ है। इस प्रकार लगभग 70 करोड़ लोग देश के गांवों में और शेष नगरों, महानगरों में निवास कर रहे हैं लेकिन जनसंख्या वृद्धि की तीव्र रफ्तार ने हमारे सामाजिक, राष्ट्रीय, मानवीय विकास और विकासोन्मुखता पर ही बेहद जटिल प्रश्नचिन्ह टांक दिया है।

जनसंख्या-वृद्धि की समस्या आज भारत ही नहीं सारे एशिया महाद्वीप और सारे विश्व के लिए महत्वपूर्ण विषय बन चुकी है। तदंतर हमारे देश में भी आबादी पर नियंत्रण के प्रयास विश्व के दूसरे देशों की तरह प्राथमिकता के आधार पर किए जा रहे हैं लेकिन इस समस्या का कोई समाधान सामने आता नजर नहीं आ रहा है। सरकार आबादी पर नियंत्रण के लिए कृत संकल्प है। पंचवर्षीय योजनाओं में अब तक करोड़ों रुपये परिवार नियोजन कार्यक्रम पर खर्च किए जा चुके हैं, लेकिन समस्या फिर भी काबू से बाहर है। ऐसा क्यों है ?

दरअसल परिवार नियोजन एक निजी और नितांत व्यक्तिगत मामला है। इसके लिए लोगों में जागरुकता पैदा करने का काम सरकार और सरकारी एजेंसियां अकेले नहीं कर सकती। अतः आम आदमी को जनसंख्या-विस्फोट के व्यापक खतरों से सावधान व जागरुक करने के लिए परिवार नियोजन कार्यक्रम का विकेंद्रीकरण किया जाना चाहिए। इस तथ्य को सरकार ने संभवतः पकड़ भी लिया है। इसलिए इस कार्यक्रम की व्यापक समीक्षा की जा रही है और जनसंख्या-नियंत्रण को अब अहम् मुद्दा बनाया जा रहा है, ताकि सन् 2000 ई० तक भारत की जनसंख्या को स्थिर करने का लक्ष्य पूरा किया जा सके। अनुमान है कि शताब्दी के अंत तक देश की जनसंख्या एक अरब का आंकड़ा पार कर जाएगी।

भारत विविधताओं वाला देश है। देश के भिन्न-भिन्न भागों में लोगों की मान्यताएं और सामाजिक, आर्थिक दशाएं अलग-अलग हैं। इसलिए समान आधार वाला परिवार-नियोजन-कार्यक्रम हमारे देश में सफल हो सकना गैर स्वाभाविक है। इसके लिए देश के विभिन्न समुदायों, वर्गों और शहरों व गांवों की संस्कृतियों का जरुरी और व्यापक अध्ययन करना होगा और लोगों की सांस्कृतिक मान्यताओं को ध्यान में रखकर कार्यक्रम बनाने होंगे। यहां कहना उचित होगा कि निजी स्वार्थ में लगे लोगों में भी इस दिशा में पर्याप्त इच्छा शक्ति का अभाव है। बगैर किसी राजनीतिक हस्तक्षेप से एवं सीमित पूर्वाग्रहों से अपने को मुक्त करके, इस कार्यक्रम की सफलता में योगदान के लिए आगे आना होगा।

परिवार नियोजन देश के बहुमुखी विकास की प्रक्रिया का आवश्यक और आधारभूत अंग है, लेकिन यह सोच देशवासियों में अभी तक विकसित नहीं हो सकी है। यह भी कारण है कि जन्म और मृत्यु दर में क्षेत्रों के हिसाब से काफी अंतर बना हुआ है। उदाहरण के तौर पर केरल में जन्म दर 21.5 प्रतिशत प्रति हजार है तो उत्तर प्रदेश में 39 प्रतिशत प्रति हजार से भी अधिक है। बढ़ती आबादी के कारण प्राकृतिक संसाधनों पर भी भारी दुष्प्रभाव पड़ा है। पर्यावरण प्रदूषण, पानी, बिजली और यहां तक कि खाद्य पदार्थों की समस्या बढ़ने लगी है। आवासीय आपूर्ति के लिए कृषि योग्य भूमि पर बहुमंजिली इमारतें खड़ी की जा रही हैं, नई-नई आवासीय कालोनियां बसानी पड़ रही हैं। इससे कृषि भूमि एक निरंतरता से कम हो रही है। कृषि भूमि का निरंतरता से कम होते जाना कितना खतरनाक और भयावह कार्य सिद्ध होगा, इसकी कल्पना तो शायद हम कर रहे हैं, किंतु इस दिशा में आवश्यकतानुरूप सजग, सचेष्ट हम नहीं हैं। यह दोष किस पर थोपेंगे ?

जनसंख्या वृद्धि के मामले में विश्व की स्थिति पर ध्यान देना भी यहां उपयुक्त होगा। सन् 1950 ई० में विश्व की कुल जनसंख्या दो अरब 50 करोड़ थी। इस समय 5 अरब से कहीं अधिक है। भारत की जनसंख्या 1950 ई० में लगभग 37 करोड़ थी। अब 85 करोड़ से अधिक है। अनुमान है कि विश्व की आबादी शताब्दी के अंत तक 6 अरब का आंकड़ा पार कर जाएगी। सबसे अधिक जनसंख्या एशिया महाद्वीप में है। दो देश मलेशिया और सिंगापुर अपवाद हैं, कम आबादी होने का। इन देशों में परिवार नियोजन कार्यक्रम को रोक दिया गया है। चीन तथा भारत जनसंख्या-वृद्धि की दृष्टि से सबसे आगे हैं। सन् 1970 ई० में चीन में जन्म-दर प्रति एक हजार व्यक्तियों के पीछे 34 थी, लेकिन परिवार नियोजन कार्यक्रम को अपना कर चीन ने अपने देश में जन्म-दर घटाने में आशातीत सफलता प्राप्त कर ली। परिणामस्वरूप इस समय चीन में जन्म-दर लगभग 17 प्रतिशत प्रति हजार है। जापान ने भी जनसंख्या वृद्धि में इसी तरह सफलता प्राप्त की है। इंडोनेशिया, थाईलैंड, मैक्सिको और दक्षिणी कोरिया आदि देशों ने आबादी को बढ़ने से रोकने के ठोस उपाय अपने देशों में किए हैं, लेकिन भारत और एशिया के कई अन्य देश इस मामले में अभी काफी पीछे हैं।

कहने का तात्पर्य यह है कि स्वास्थ्य के लिए परिवार नियोजन का अपना विशिष्ट महत्व है। संविधान के अनुसार जन स्वास्थ्य और सफाई, अस्पताल व दवाखाने राज्य सूची के अंतर्गत आते हैं और जनसंख्या-नियंत्रण, परिवार-कल्याण, चिकित्सा, शिक्षा, खाद्य पदार्थों व अन्य वस्तुओं में मिलावट, औषधियां और चिकित्सा-व्यवसाय तथा जन्म व मृत्यु के पंजीकरण सहित जनसंख्या संबंधी आंकड़े, पागलपन तथा मानसिक विकृतियां समवर्ती सूची में आते हैं। रोगों की रोकथाम और उन पर नियंत्रण राष्ट्रीय विकास के मुख्य मुद्दे भी हैं। अतः ग्रामीण क्षेत्रों में रोगों पर नियंत्रण पाना अथवा उनका उन्मूलन करना राष्ट्र की प्रमुखतम आवश्यकता है, जबकि ग्रामीण और पिछड़े इलाकों में बड़े पैमाने पर लोगों को परिवार नियोजन के लिए प्रेरित करने तथा उनके स्वास्थ्य की देखभाल का आवश्यक कार्य, हो नहीं पा रहा है। सन् 1975 के बाद नसबंदी कराने वाले पुरुषों की संख्या में काफी कमी हुई है। जनसंख्या विशेषज्ञों का अनुमान है कि शताब्दी के अंत तक भारत की आबादी एक अरब तक पहुंच जाएगी अर्थात् जनसंख्या के मामले में भारत चीन को भी कहीं पीछे छोड़ देगा।

परिवार नियोजन की शिक्षा में एक महत्वपूर्ण तथ्य संयम की शिक्षा नहीं दिया जाना है, जबकि भारतीय जनमानस में संयम के लिए पर्याप्त स्थान है। आवश्यकता इसके लिए प्रेरणा देने की है। इस कार्य के लिए बड़े पैमाने पर स्वैच्छिक संगठनों का सहयोग लिया जा सकता है। स्वयंसेवी संस्थाओं का जाल आवश्यकतानुसार फैलाया जा सकता है। गांवों में रोजगार के अवसर उत्पन्न करके और परंपरागत रोजगारों को प्रश्रय देकर, नगरों तथा महानगरों पर आबादी के निरंतर बढ़ रहे बोझ को नियंत्रित किया जाना चाहिए। आबादी के भारी दबाव से आज देश की राजधानी का ही अस्तित्व संकट में आ फंसा है। महानगरों का मौलिक स्वरूप बेहद बिगड़ गया है। दिल्ली में ही विगत तीस वर्षों में 50 लाख से अधिक आबादी बढ़ गई है। फलतः राजधानी का तीन चौथाई हिस्सा रहने लायक नहीं रह गया है। स्वाधीनता के 44 वर्ष बाद भी आज राष्ट्र का चहुंमुखी विकास नगण्य-सा लगता है तो जनसंख्या-वृद्धि की असीमता ही इसके मूल में है।

राजधानी के नारकीय जीवन से भी ग्रामीण व्यवस्था में स्वास्थ्य की समस्या का अवलोकन किया जा सकता है, जहां कि आबादी का घनत्व सर्वाधिक है। कितनी विचित्र बात है कि देश के सभी बड़े अस्पताल प्रायः महानगरों में ही अवस्थित हैं। चिकित्सक भी डिग्रीधारक होकर शहर में ही बस जाना पसंद करते हैं। गांवों में जाने में उनकी रुचि नहीं होती। इसके कारण भी हैं। वर्तमान की सुविधाभोगी मानसिकता और व्यवस्था भी उन्हें गांवों से परहेज की प्रेरणा देती है। तथ्य यह भी है कि शहरों में भी चिकित्सकों की संख्या आबादी के घनत्व

के आधार पर पर्याप्त नहीं है लेकिन गांवों की स्थिति सचमुच शोचनीय है। बीमारी से बचने और स्वस्थ रहने की कोई सुदृढ़ व्यवस्था हमारे गांवों में नहीं है। विकास खंड-स्तर पर जहां कहीं स्वास्थ्य केन्द्र अवस्थित हैं, उनकी दशा देख कर उनके औचित्य का प्रश्न भी तत्क्षण उठ खड़ा होता है। अधिसंख्य स्वास्थ्य केन्द्रों पर मामूली स्तर की दवाएं भी उपलब्ध नहीं होती। इन केन्द्रों पर चिकित्सकों के दर्शन भी यदा-कदा ही होते हैं। इन केन्द्रों के चिकित्सक तथा अन्य कर्मचारी प्रायः ग्रामीण रोगियों को लूटने-खसोटने में ही अपना महत्व समझते हैं। यों नगरों, महानगरों के बड़े अस्पतालों में भी लूटने-खसोटने का धंधा बहुत व्यापक है और यह चौतरफा मूल्यहीनता समर्थन का वीभत्स दुष्परिणाम भी है लेकिन यह कहकर इस पेशे की पवित्रता को नजरअंदाज करना उचित नहीं होगा। फिर भी पीड़ित के प्रति सेवा भावना को राहू डस गया लगता है। यह भी अजीब विडंबना है कि रोगी को अस्पताल में लाने के साथ ही मोल-भाव का सिलसिला शुरु हो जाता है और यह दोतरफा होता है। पीड़ित और पीड़ा का अस्तित्व ही ऐसे में गौण हो जाता है। इस त्रासद स्थिति के लिए गांव के लोग कम जिम्मेदार नहीं हैं और यह ऐसा मुद्दा, एक ऐसा रोग है, जिसका समाधान/इलाज किसी के पास नहीं और सबके पास है।

चिकित्सा सेवा का पर्याप्त विस्तार आजादी के वर्षों में हुआ है। इसमें किसी को कोई संदेह होना नहीं चाहिए। प्रथम पंचवर्षीय योजना के समय देश में मेडिकल कालेजों की संख्या 30 थी जो आज बढ़कर 126 हो गई है। यह भी ध्यातव्य है कि 1951 से पहले देश में एक भी प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र अथवा उपकेन्द्र नहीं था जिसका कोई लाभ ग्रामीण उठा पाते। देश में (31 दिसंबर 1988 तक की स्थिति के अनुसार) लगभग 16,756 प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र और 1,12,004 उपकेन्द्र ग्रामीण क्षेत्रों में हैं और चिकित्सा-विज्ञान में मलेरिया, क्षय-रोग और हैजा जैसे भयावह कहे और माने जाने वाले रोगों पर विजय पा ली गई है। चेचक जैसी भयानक बीमारी का उन्मूलन भी हुआ है। इस सबका सुखद पहलू यह है कि 1951 में जो सामान्य मृत्यु दर 27.4 प्रति हजार थी वह 1988 में घटकर 10.9 प्रति हजार रह गई और पांचवे दशक में जो शिशु मृत्यु दर 146 प्रति हजार थी, वह 1988 में 94 प्रति हजार पर आ गई। ये उपलब्धियां नगण्य नहीं हैं, किन्तु निर्विराम जनसंख्या-वृद्धि ने इन उपलब्धियों को नगण्य सा बना दिया है और निश्चित रूप से यह सामूहिक अपराध है। तब इस अपराध के लिए ठोस दण्ड की व्यवस्था क्यों नहीं है?

इसी अपराध का परिणाम यह भी है कि देश के एक करोड़ 20 लाख विकलांगों में लगभग 90 लाख विकलांग ग्रामीण क्षेत्रों में हैं। राज्यों की दृष्टि से उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, बिहार और राजस्थान ऐसे हैं जिनमें परिवार नियोजन का कार्यक्रम सर्वाधिक पिछड़ा हुआ है। यह भी तथ्य है कि पिछड़े वर्गों और अशिक्षित परिवारों में अधिक बच्चे हो रहे हैं। इस संदर्भ में ईमानदारी से विचारमंथन हो सके और उसे अमल में भी लाया जा सके तो, जनसंख्या-विस्फोट पर अनुकूल परिणाम आना सुनिश्चित हो सकता है। अधिक बच्चे पैदा करने वालों पर दृढ़ता पूर्वक परिवार नियोजन का पालन करने के लिए प्रेरित किया जाना चाहिए और समान रूप में उसे लागू किया जाए।

जनसंख्या वृद्धि पर अंकुश लगे इसके लिए निकट भविष्य में सरकार को इस प्रकार की व्यवस्थाएं लागू करने के लिए बाध्य होना भी पड़ सकता है। स्वास्थ्य की दृष्टि से भी इस आवश्यकता को अनदेखा नहीं किया जाना चाहिए।

तथ्य की बात है कि गरीबी रेखा से नीचे का जीवनयापन कर रहे परिवारों में 60 हजार बच्चे प्रति दिन जन्म लेते हैं। इस प्रकार एक वर्ष में जन्मने वाले बच्चों का योग करने में कोई परेशानी न होगी अर्थात् लगभग 22 लाख बच्चे प्रतिवर्ष जन्म पाते हैं। इनमें से 25 हजार बच्चे कुपोषण और समुचित चिकित्सा-सुविधा के अभाव में दम तोड़ते हैं। सामान्यतः प्रतिदिन लगभग एक हजार बच्चे असाध्य रोगों, पौष्टिक आहार एवं सामान्य उपचार न मिल पाने के कारण मौत का ग्रास बनते हैं।

वर्तमान समय में देश के 19,640 प्राथमिक चिकित्सा केन्द्रों, 1,12,874 केन्द्रों, 1,666 सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्रों, 5 लाख 86 हजार प्रशिक्षित दाइयों और 4 लाख 10 हजार स्वास्थ्य गाइडों के अतिरिक्त राज्य और केन्द्र शासित राज्यों के अधीन चलने वाले ग्रामीण दवाखानों की सहायता से ग्रामीण क्षेत्रों में प्राथमिक स्वास्थ्य सेवाएं उपलब्ध कराई जा रही हैं। इसके अतिरिक्त चिकित्सा की आयुर्वेद, सिद्ध, यूनानी, प्राकृतिक, योग और आमची चिकित्सा-पद्धतियों के माध्यम से लगभग 4 लाख पंजीकृत चिकित्सक रोगियों का उपचार करने में लगे हुए हैं। इनमें से अधिकांश ग्रामीण क्षेत्रों में ही कार्यरत हैं। देश में इस समय 98 आयुर्वेदिक कालेज, 17 यूनानी और दो सिद्ध कालेज सरकारी और गैर सरकारी क्षेत्र में चल रहे हैं। होम्योपैथी में स्नातक-पूर्व-शिक्षा के लिए 96 संस्थान हैं, इनमें 69 गैर सरकारी हैं। होम्योपैथी पद्धति के 163 अस्पताल, 5,183 औषधालय और एक लाख 43 हजार चिकित्सक हैं।

इस प्रकार चिकित्सा व्यवस्था का बहुमुखी विकास देश में हुआ और हो रहा है ।

अब तो बच्चों की अपंगता और बाल-मृत्यु की रोकथाम के उपाय भी बड़े पैमाने पर सुलभ हैं । 1978 से डिप्थीरिया, काली खांसी, टिटनेस और तपेदिक जैसे रोगों की रोकथाम के लिए टीके लगाने का व्यापक कार्यक्रम देश में शुरु किया गया । इस कार्यक्रम के अंतर्गत पोलियो के टीके लगाने की शुरुआत 1979-80 में और बी०सी०जी० के टीके लगाने की शुरुआत 1981-82 में तथा खसरे का टीका लगाने की शुरुआत 1985-86 में हुई । स्कूली बच्चों को टिटनेस टॉक्साइड के टीके 1980-81 से लगाना शुरु किया गया है ।

इस प्रकार रोगों की रोकथाम के प्रयास सरकार के स्तर पर उल्लेखनीय रूप में किये जा रहे हैं । ग्रामीण स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं का और अधिक निराकरण करने के लिए सरकार ने पांच हजार की आबादी वाले प्रत्येक गांव में एक स्वास्थ्य उपकेन्द्र खोलने की योजना भी बनाई है । साथ ही गर्भवती महिलाओं को प्रसव के पूर्व और प्रसव के बाद समुचित सेवा उपलब्ध कराने के लिए बहुउद्देश्यीय महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता की नियुक्ति भी इन उपकेन्द्रों में की जा रही है । सरकार ने सन् 2001 तक स्वास्थ्य-रक्षा की सभी सुविधाएं गांव के प्रत्येक घर में पहुंचाने का लक्ष्य निर्धारित किया है और इन सबके क्रियान्वयन में अपेक्षित ईमानदारी सभी ओर से अमल में लाई जाएं तो लक्ष्य प्राप्ति का उद्देश्य निश्चित ही पूरा हो सकेगा । लेकिन इस सबके लिए ग्रामीणों को पर्याप्त रूप में शिक्षित किया जाना प्रथमतः आवश्यक है और बढ़ती आबादी पर नियंत्रण तो लाना ही होगा अन्यथा विकास की तमाम उपलब्धियां नगण्य होती रहेंगी ।

टाइप-दो, बी- 26/359,
डी०एम०एस० कालोनी,
हरिनगर, घंटाघर
नई दिल्ली- 110064

जवाहर रोजगार योजना को और अधिक प्रभावी बनाया जायेगा

प्रधानमंत्री श्री पी.वी. नरसिंह राव ने कहा है कि उच्चतम सीमा के अन्तर्गत आने वाली भूमि को भूमिहीन गरीबों में बांटने के कार्य को उच्च प्राथमिकता दी जा रही है। प्रधानमंत्री ने यह जानकारी 19 नवम्बर 1991 को शहरी ग्रामीण विकास मंत्रालय की प्रथम सलाहकार समिति की बैठक में दी । उन्होंने कहा कि मुख्यमंत्रियों से विभिन्न न्यायालयों के स्थगन आदेशों के समाप्त होने के बाद भूमि वितरण कार्य को तेज करने के लिए कहा गया है । जवाहर रोजगार योजना के बारे में प्रधानमंत्री ने कहा कि कोष के दुरुपयोग के मामलों की जांच के लिए विश्वविद्यालयों जैसे स्वतंत्र निकायों द्वारा सर्वेक्षण कराया जा रहा है और इसके साथ ही यह भी पता लगाया जाएगा कि जिन लोगों के लिए यह योजना बनाई गई है उनको इसका लाभ मिल रहा है अथवा नहीं ।

ग्रामीण विकास राज्य मंत्री श्री जी. वेंकटस्वामी ने इस अवसर पर कहा कि पिछले तीन दशकों के दौरान किए गए ठोस प्रयासों के बावजूद ग्रामीण बेरोजगारी दूर नहीं की जा सकी और इसलिए 1989-90 में जवाहर रोजगार योजना शुरू की गई थी । उन्होंने कहा कि वर्ष 1989-90 के दौरान जवाहर रोजगार योजना कार्यक्रम के अंतर्गत 2458 करोड़ रुपये खर्च किए गए और इसके अंतर्गत 86.5 करोड़ श्रम दिवस के बराबर रोजगार के अवसर पैदा किए गए । इस वर्ष भी 90 करोड़ श्रम दिवस के बराबर रोजगार के अवसर पैदा किए जा सकेंगे ।

संसद सदस्यों ने जवाहर रोजगार योजना के अंतर्गत विभिन्न योजनाओं के प्रभावी कार्यान्वियन पर निगरानी के लिए खंड और जिला स्तरीय समितियों का गठन करने का सुझाव दिया है ।

बांदा जनपद के विकास में तुलसी ग्रामीण बैंक की भूमिका

डॉ० कृष्ण कुमार मिश्र

भारतीय ग्रामीण अनेक आर्थिक एवं सामाजिक समस्याओं के भंवर में जकड़े हुए हैं। गांवों में विद्यमान गरीबी, बेरोजगारी, अन्धविश्वास, अशिक्षा, ऋणग्रस्तता, शोषण युक्त जीवन तथा भाग्यवादिता की स्थिति शासन द्वारा क्रियान्वित प्रत्येक विकास परियोजनाओं में अनावश्यक बाधा उपस्थित करती है। इसी तारतम्य में यह कहा जा सकता है कि ग्रामीण विकास एक चुनौती भरा कदम है। ग्रामीण विकास कृषि विकास पर आधारित है। किसानों की कृषि से सम्बन्धित प्रमुखतः दो समस्यायें हैं– प्रथम, अधिकांश कृषि मानसूनी वर्षा पर निर्भर करती है जो कि अनिश्चित व अनियमित है तथा जिसने किसानों को भाग्यवादी बना दिया है। द्वितीय, अधिकांश किसान लघु एवं सीमान्त कृषक की श्रेणी में आते हैं जो ऋण ग्रस्त हैं।

1972 में बैंकिंग आयोग ने इस समस्या के समाधान तथा ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करने वाले लघु कृषकों, लघु व्यापारियों, आर्थिक रूप से विपन्न वर्गों, दस्तकारों को आर्थिक सहायता उपलब्ध कराये जाने के उद्देश्य से ग्रामीण बैंकों की स्थापना का सुझाव दिया। इस सुझाव के आधार पर 26 सितम्बर, 1975 को महामहिम राष्ट्रपति द्वारा 'क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक' अध्यादेश 1975 पारित किया गया। इस अध्यादेश के आधार पर 2 अक्तूबर, 1975 को गांधी जयन्ती के अवसर पर देश के चार राज्यों में सर्वप्रथम पांच क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों यथा–प्रथमा बैंक मुरादाबाद (उ.प्र.), गोरखपुर क्षेत्रीय बैंक, गोरखपुर (उ.प्र.), क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक भिवानी, हरियाणा, जयपुर-नागौर आंचलिक ग्रामीण बैंक (राजस्थान), गौड़ ग्रामीण बैंक, मालदा (प. बंगाल) की स्थापना की गई। इसी अनुक्रम में 26 मार्च 1981 को जनपद बांदा की स्थापना की गई जिसका प्रवर्तक बैंक जनपद का अग्रणी बैंक इलाहाबाद बैंक है। जनपद बांदा एवं तुलसी ग्रामीण बैंक–वस्तुतः तुलसी ग्रामीण बैंक जनपद बांदा (उ.प्र.) के ग्रामीण विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। इस बैंक की स्थापना का उद्देश्य बेरोजगार हाथ को काम देना, गरीबी की रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाले लोगों का आर्थिक उत्थान करना था। उपर्युक्त उद्देश्यों की पूर्ति हेतु तुलसी ग्रामीण बैंक सामान्यतः उन समस्त कार्यों को सम्पादित करता है जिन्हें वाणिज्य बैंक करते हैं। उदाहरणतः–यह विभिन्न खातों के माध्यम से जमा स्वीकार करता है, ऋण प्रदान करता है, ग्राहक के एजेण्ट के रूप में कार्य करता है तथा उन्हें लॉकर जैसी सुविधायें भी प्रदान करता है।

बैंक का कार्य क्षेत्र सम्पूर्ण बांदा जनपद है जो प्रदेश के पिछड़े जनपदों में स्थान बनाये हुए है। प्रशासनिक दृष्टि से जनपद 6 तहसीलों एवं 13 विकास खण्डों में विभाजित है जिसमें सभी बैंकों की 136 शाखायें कार्यरत हैं जिसमें 83 शाखायें तुलसी ग्रामीण बैंक की हैं जो कुल बैंक शाखाओं का 61.02 प्रतिशत है।

शाखा प्रसार एवं वर्तमान स्थिति

उल्लेखनीय है कि बांदा जनपद के 76 स्थानों पर ग्रामीण बैंक की शाखायें ही अकेले ग्रामीण विकास में अपना सक्रिय योगदान दे रही हैं। ग्रामीण विकास की स्पष्ट झलक कृषि क्षेत्र के विकास करने पर ही स्पष्ट हो सकती है। बैंक ने मात्र 30.00 प्रतिशत कृषि क्षेत्र पर ही ऋण वितरण किया है जिससे और अधिक कृषि ऋण वितरित किये जाने की अपेक्षा की जाती है क्योंकि जनपद की अधिकांश जनसंख्या कृषि पर ही निर्भर है। उल्लेखनीय है कि जनपद के सग्राविका (समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम) में बैंक का 81.45 प्रतिशत योगदान रहा है। सम्पूर्ण जनपद में 383.66 लाख रुपये की वित्तीय सहायता सग्राविका के अन्तर्गत वितरित की गई जिसमें सर्वाधिक 81.45 प्रतिशत योगदान तुलसी ग्रामीण बैंक का है तथा जिसमें 41.62 प्रतिशत ऋण अनुसूचित जाति/जनजाति को वितरित किया गया है।

स्थापना से लेकर अब तक अर्थात् 10 वर्षों में तुलसी ग्रामीण बैंक ने बांदा जनपद के शाखा विस्तार का कुल जमा तथा ऋण वितरण के क्षेत्र में पर्याप्त विकास किया है। इसके अलावा ग्रामीण विकास के लिए जितनी भी योजनायें बनाई गई हैं उनकी लक्ष्यपूर्ति में भी तुलसी ग्रामीण बैंक की विशेष भूमिका है। यह कहने में तनिक सन्देह नहीं कि तुलसी ग्रामीण बैंक ने अपनी स्थापना के उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिये ग्रामीण क्षेत्रों में शाखायें स्थापित कर ग्रामीण विकास हेतु रचनात्मक कार्य किये हैं। बैंक ने प्रत्येक अंगीकृत क्षेत्र का स्वयं सर्वेक्षण

करके परियोजनायें तैयार की हैं जो ग्रामीण विकास तथा राष्ट्रीय योजनाओं में सक्रियता से भागीदारी का कार्य सम्पन्न कर रही है। बैंक ने 56504 लोगों को जो बेरोजगार और गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन कर रहे थे उनको 1494.88 लाख रुपये की वित्तीय सहायता प्रदान करके ग्रामीण क्षेत्र में एक क्रान्ति ला दी है। इसके अतिरिक्त बैंक ने बागवानी, वृक्षारोपण, दुग्ध उत्पादन, भूमि संरक्षण जैसे राष्ट्रीय कार्यों में भी सक्रिय भागीदारी अदा की है फिर भी तुलसी ग्रामीण बैंक से आठवीं पंचवर्षीय योजना जिसमें कुल योजना व्यय का 50 प्रतिशत ग्रामीण विकास प्रक्रियाओं पर खर्च किए जाने का प्रावधान है, में ग्रामीण विकास के प्रति अनेक अपेक्षायें हैं यथा–

(i) गांव का जमा धन गांव के ही विकास पर खर्च किया जाए जिससे जमा ऋण अनुपात बराबर रह सके।

(ii) गांव में व्याप्त बेरोजगारी को दूर करने का प्रयत्न किया जाए।

(iii) हर हाथ को काम दिया जाए।

(iv) कृषि के आधुनिकीकरण हेतु किसानों को भरपूर मदद दी जाए।

(v) स्वरोजगार को महत्व दिया जाय।

(vi) शाखा प्रबन्ध के ऋण वितरण में विस्तार किया जाय।

तुलसी ग्रामीण बैंक द्वारा ग्रामीण विकास में सराहनीय प्रगति किये जाने के बावजूद ग्रामीण बैंक में कुछ समस्यायें विद्यमान हैं जिनको दूर किए बिना ग्रामीण विकास को गति प्रदान नहीं की जा सकती यथा–

(1) स्टाफ का प्रशिक्षण–तुलसी ग्रामीण बैंक में जो स्टाफ नियुक्त किया जाता है, उनके प्रशिक्षण हेतु अभी तक कोई उचित पाठ्यक्रम निश्चित नहीं है। नियुक्त स्टाफ को प्रशिक्षण हेतु तीन दिन से लेकर अधिकतम दो सप्ताह के अल्प प्रशिक्षण के लिये ग्रामीण विकास संस्थान लखनऊ केन्द्र पर भेजा जाता है जो स्टाफ के पूर्ण प्रशिक्षण के लिये पर्याप्त नहीं। यही कारण है कि प्रशिक्षण के अभाव में ग्राहक सेवा प्रभावित होती रहती है।

(2) शाखा विस्तार–ग्रामीण बैंक को शाखा विस्तार कार्यक्रम में लाइसेन्स प्रदान करने की प्राथमिकता उपलब्ध है। ग्रामीण क्षेत्र में पुलिस चौकी, परिवहन, डाकघर, चिकित्सा, शिक्षा तथा विपणन जैसी आधारभूत सुविधाओं की कमी होने पर भी शाखाओं का प्रसार हो रहा है। इसके फलस्वरूप असुरक्षा की समस्या से जमा संसाधन में कमी होगी तथा ग्रामीण जनता में नवचेतना का समुचित संचार नहीं हो पाएगा।

तुलसी ग्रामीण बैंक लघु सीमान्त कृषक, कृषि श्रमिक, लघु उद्योगों, लघु व्यवसायी, ग्रामीण दस्तकार आदि को ऋण देता है। ऋण प्राप्त करने वाले लोगों का निर्धारण उनकी वार्षिक आय के आधार पर निश्चित किया जाता है परन्तु आय निर्धारण की कोई एक निश्चित प्रक्रिया नहीं है। बैंक अधिकारी ही आय का मूल्यांकन व्यक्ति विशेष से प्राप्त सूचनाओं के आधार पर करता है जिससे सही आय निर्धारण में कभी-कभी भूल हो जाती है। इसके अतिरिक्त अधिकांश ग्रामीण गरीब ऋण लेने के झंझट में नहीं पड़ना चाहते क्योंकि बैंक के जटिल नियमों में वे बंधना नहीं चाहते। ऐसी परिस्थिति में ग्रामीण बैंक अपने उद्देश्य में तभी सफल हो सकते हैं जब उनका ग्रामीणों से निकटस्थ सम्पर्क हो तथा ग्रामीणों के प्रति अपनत्व की भावना रखे। ग्रामीण बैंकों के लिए यह एक चुनौती पूर्ण काम है कि वे ऐसे गरीब व्यक्तियों को ऋण सुविधायें उपलब्ध करवाकर उत्पादक, उत्पादकता तथा उनके जीवन स्तर को ऊंचा उठायें साथ ही उन्हें महाजनों के शोषण से मुक्ति पाने का अवसर सुलभ करें।

ग्रामीण बैंक द्वारा जिस गति से ऋण का वितरण हो रहा है, उस गति से ऋण की वसूली नहीं हो पा रही है। भविष्य में ऋण माफी की गुंजाइश होने के कारण ग्रामीण बड़े अनमने ढंग से ऋण अदायगी करते हैं जिसकी रफ्तार काफी धीमी होती है। अतः आवश्यकता इस बात की है कि ऋण माफ होने की गुंजाइश के सम्बन्ध में ग्रामीणों में पनपे भ्रामक प्रचार को समाप्त करने का प्रयास किया जाय। इसके साथ ही सामाजिक सेवा तथा व्यवसायिक सुरक्षा और लाभदायकता के मध्य समन्वय बनाये रखना जरूरी है। बैंक के उच्चधिकारियों को महीने में एक बार आवश्यक रूप से प्रत्येक शाखा में पहुंच कर जनता से सम्पर्क करना चाहिए और उनकी शिकायतों को तुरन्त दूर करने का प्रयत्न करना चाहिये ताकि ग्रामीण जो हमेशा से शोषण के शिकार रहे हैं, आर्थिक व सामाजिक दृष्टि से पिछड़े हैं, वह प्रसन्नता पूर्वक ग्रामीण बैंक से लाभ हासिल कर सकें और ग्रामीणों की शहरों की ओर पलायनवादी प्रवृत्ति समाप्त हो सके। यदि उपर्युक्त समस्याओं का निराकण कर दिया जाय तो इसमें तनिक सन्देह नहीं कि यह बैंक बांदा जनपद के ग्रामीण विकास में और अधिक तेजी ला सकती है। वैसे भी ग्रामीण बैंक के सम्बन्ध में जन-जन का यह विचार है–

''तुलसी ग्रामीण बैंक का हुआ विकास
यह जनपद बांदा की आस
ग्राम-ग्राम में गूंजा नारा
तुलसी बैंक है सबको प्यारा

''प्राध्यापक भूगोल
अतर्रा महाविद्यालय
अतर्रा (बांदा) 210201 (उ.प्र.)

पुस्तक समीक्षा

वेदान्त दर्शन : प्रस्तुति : डा० विनय
प्रकाशक : डायमण्ड पाकेट बुक्स (प्रा०) लि०
2715, दरियागंज, नई दिल्ली, मूल्य 12 रु०

प्रस्तुत अभिनव ग्रन्थ हिन्दी में वेदान्त जगत के जिज्ञासुओं के लिए वरदान सिद्ध हुआ है। डॉ० विनय ने अपनी लेखनी से कुशल शिल्पी की तरह वेदान्त की सूक्तियों को हिन्दी भाषा में तराश कर आकर्षक बना दिया है। आद्योपान्त ग्रन्थ के अवलोकन से प्रतीत होता है यह बहुजनहिताय को ध्यान में रखकर किया गया प्रयास है। हिन्दी में इस तरह के ग्रन्थों का बहुत अभाव रहा है। उसकी पूर्ति इस ग्रन्थ के रूप में हो जाती है।

प्रस्तुतकर्ता ने ब्रह्मसूत्रों, पूर्व मीमांसा, जैमिनी, न्याय, सांख्य, योग आदि का प्रमाण उद्धृत किया है। ग्रन्थ को चार खण्डों में विभाजित किया गया है और उनमें अलग-अलग प्रकरण हैं। प्रथम खण्ड में कौषीतकि ब्राह्मणोपनिषद् का प्रसंग है जिसमें बालाकि और अजातशत्रु का उदाहरण दिया गया है। ब्रह्म को जगत का निमित्त कारण और प्रकृति को उपादान कारण माना गया है। निर्देश में यह भी है कि शंकराचार्य उपादान कारण और निमित्त कारण एकमात्र ब्रह्म को मानते हैं।

दूसरे खण्ड में यह कहा गया है कि जीव ब्रह्म से कभी अलग नहीं रहता। मिट्टी न हो तो घड़ा भी नहीं हो सकता। यह बात कारण और कार्य की एकता को सिद्ध करती है। जीव-ब्रह्म की एकता इस रूप में सिद्ध की गयी है कि जीवात्मा के भीतर परमात्मा व्यापक है।

तीसरे खण्ड में वेदान्त का सबसे बड़ा प्रश्न है कि सृष्टि अचेतन से क्यों होगी? आज के समय में सौल और मैटर की जो बात कही जाती है भौतिकवादी मैटर को प्रमुख मानता है और अध्यात्मवादी आत्मा को। यही आत्म ब्रह्म के रूप में प्रयुक्त होता है। वही चेतन है।

इसमें मुख्य प्रतिपादित विषय हैं– नास्तिकता और प्रकृति के तीन गुण और रचना प्रवृत्ति, नास्तिकता का प्रश्न तथा क्षणिकवाद का सिद्धान्त। ईश्वर को न मानना नास्तिकता है अर्थात् जो ईश्वर के स्वरूप को नहीं मानता और केवल प्रकृति को मानता है वह नास्तिक है। प्रकृति में सत्व, रज, तम का स्वामित्व सिद्ध नहीं होता है क्योंकि तीनों का परस्पर संयोग कर्म पर ही निर्भर करता है, कर्म ही इसका मुख्य कारण है। क्षणिकवाद को मानने वाले ये मानते हैं कि परमाणु प्रत्येक क्षण परिवर्तनशील हैं। एक परमाणु दूसरे परमाणु में बदलता रहता है तो यह क्यों न माना जाये कि एक परमाणु दूसरे में क्रिया का उत्पादक है और इस क्रिया के कर्म में समुदाय बनेगा।

क्या प्रत्येक वस्तु क्षणिक है? वेदान्त यह भी नहीं मानता कि प्रत्येक वस्तु क्षणिक है क्योंकि यह बुद्धि के विरुद्ध है। हमारे पास दो अनुभूतियां हैं। प्रत्यभिज्ञा अर्थात् स्मृति या बातों का स्मरण और दूसरा विचार। यदि पहले देखी हुई वस्तु और उसको देखने वाला क्षणिक हो तो प्रत्यभिज्ञा हो नहीं सकती क्योंकि जिस चीज को हमने देखा यदि वह क्षणिक है तो हमारे मन पर कोई प्रभाव नहीं डाल सकती। अभाव की बात तो तब मानी जा सकती है कि बिना बीज के बोये भूमि में अंकुर फूटे। भाव से भाव की उत्पत्ति की बात इस लिए सत्य है कि पीपल के बीज से पीपल उत्पन्न होता है अर्थात् कारण से कार्य की उत्पत्ति।

सुषुप्ति में जीवात्मा ब्रह्म में सो रहा होता है इसलिए वह वहीं से जागता है। यह आत्मा एक ही है, क्योंकि जो सोता है वही जागता है और जो जागता है वही सोता है। सोने से पूर्व जो कर्म उसने अधूरा छोड़ा था जागने के पश्चात फिर उसी कर्म को करने लगता है। इससे सिद्ध है कि सोने या जागने वाली एक ही आत्मा है।

चतुर्थ खण्ड में ज्ञान को मोक्ष प्राप्ति में साधन माना है। ब्रह्म ज्ञान से मोक्ष होता है। राजा जनक के उदाहरण से सिद्ध होता है कि ज्ञान और कर्म दोनों को मिला कर चलना चाहिए। ज्ञानी पुरुष लोक संग्रह की भावना से कर्म करते हैं। मुण्डोपनिषद् में परमात्मा को जान लेने से ब्रह्मज्ञानी कर्म क्षीण हो जाते हैं। ज्ञान प्राप्ति के लिए वर्णाश्रम धर्मोक्त कर्मों को करने की उसी प्रकार आवश्यकता है, जिस प्रकार महल के द्वार तक पहुंचने के लिए घोड़े की आवश्यकता है। महल तक पहुंच जाने के बाद घोड़े की आवश्यकता नहीं रहती है और महल में स्वयं

ही चलकर जाना पड़ता है । उपनिषदों में पृथक-पृथक लगने वाले सिद्धांत भी लगभग एक से हैं बादरि और जैमिनी के विचार से कार्य ब्रह्म और कारण ब्रह्म समानता में है । अन्ततः कारण की प्राप्ति हो ही जाती है । व्यवधान उपाधि के हैं । जैमिनी और बादरि में समता के साथ विषमता का दर्शन होता है । सम्पूर्ण वेदान्त का दर्शन इस बात पर बल देता है कि भौतिक रूप से दिखाई देने वाला सारा जगत ब्रह्म की इच्छा का परिणाम है । हम चाहते हैं कि हमें सामान्य दुःख से मुक्ति मिले किन्तु परम आनन्द पूर्ण मुक्ति में है ।

मोक्ष की अवस्था में भी आत्मा की स्थिति ब्रह्म में बनी रहती है । ग्रन्थ से यही सिद्ध होता है कि मुक्त आत्मा संकल्प द्वारा ही मोक्ष के भोगों को भोगती है । जैमिनी मोक्ष में शरीर का भाव (होना) मानते हैं । ग्रन्थ बहुत ही उपादेय है । लेखक ऋषियों एवं श्रुति के प्रमाणों का बराबर उल्लेख करके भारतीय परंपरा का निर्वाह करता है, विचारों को कहीं भी तोड़ मरोड़ कर पेश नहीं करता ।

समीक्षक : महामण्डलेश्वर
स्वामी विष्णु देवानन्द गिरि शास्त्री
भाई परमानन्द नगर
दिल्ली- 110 009

पृष्ठ 27 का शेष

"बा" नहीं मानी । बोली—"बापू कहते हैं कि इस गांव में सभी स्त्रियां स्वयं पानी खींचकर लाती हैं । तब तुम क्यों नहीं ला सकती ? सो उन्होंने मुझे यह काम बतलाया है अब अगर मैं तुमसे यह काम करवा लूंगी तो वे बड़े नाराज होंगे ।"

गांधीजी को काम करना ही रुचिकर लगता था, उसका ढौंग या प्रदर्शन करना नहीं । एक बार जब वे जेल में थे तो अपना काम निपटाकर वे एक पुस्तक पढ़ने बैठ गये । अचानक ही जेल का संतरी वहां दौड़ा हुआ आया और गांधीजी से बोला—"जेल के दरोगा जी मुआयना करने के लिए आ रहे हैं । इसलिए आप कुछ काम करते रहिए ।"

इस पर गांधीजी ने साफ मना करते हुए कहा—"मैं काम का ढौंग कदापि नहीं करूंगा । इससे तो अच्छा यह है कि आप मुझे और अधिक काम दें या किसी ऐसी जेल में भेज दें, जहां पर अधिक काम हो ।"

गांधीजी काम से न तो कभी बचने की कोशिश करते और न कभी उसमें निराशा ही अनुभव करते थे । असफलता मिलने पर भी वे बार-बार परिश्रम करने में विश्वास करते थे । 1936 की एक घटना है । गांधीजी कुछ गांवों में सफाई अभियान चला रहे थे । वे ग्रामवासियों को सफाई का महत्व बतलाते और स्वयं उनकी गंदी गलियों की सफाई करते और उनके गंदे कपड़े धोते । प्रारंभ में इन सब उपदेशों और कार्यों का ग्रामवासियों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा तो एक कार्यकर्ता ने संदेह व्यक्त किया—"बापू ! ये लोग तो बिल्कुल गंवार लग रहे हैं । हमारे परिश्रम का इन पर कोई असर ही नहीं हो रहा ।"

इस पर गांधीजी ने मुस्कराते हुए उत्तर दिया—"इतनी जल्दी हमें हिम्मत नहीं हारनी चाहिए । जिस ग्रामीण जनता की हम सदियों से उपेक्षा करते आ रहे हैं, उसकी हमें कुछ वर्षों तक तो निःस्वार्थ भाव से सेवा करनी ही चाहिए ।"

10/611, मानसरोवर,
जयपुर- 302020 (राज०)

आग की दुर्घटनायें रोकिये

- आप अपने साथ विस्फोटक एवं खतरनाक वस्तुएं जैसे पटाखें इत्यादि मत ले जाइये।
- आप अपने साथ ज्वलनशील वस्तुएं जैसे मिट्टी का तेल, पेट्रोल, फिल्में, गैस सिलिन्डर इत्यादि मत ले जाइये।
- गाड़ियों में सिगरेट, बीड़ी पीना अवांछनीय है। धूम्रपान के बाद सिगरेट अथवा बीड़ी के टुकड़े लापरवाही से इधर-उधर मत फेंकिये।
- गाड़ी के डिब्बों के भीतर स्टोव अथवा अंगीठी इत्यादि न जलाइये।

अपराधियों को ३ वर्ष की सजा तथा १००० रु० तक जुर्माना किया जा सकता है।

संरक्षा-SAFETY

संरक्षित यात्रा के लिए रेलों की सहायता कीजिये

संरक्षा संगठन
उत्तर रेलवे, इलाहाबाद मंडल

ग्रामीण वित्त में क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों का योगदान

सूरज सिंह

भारत एक ग्राम प्रधान देश है जिसकी 75 प्रतिशत से भी अधिक जनता गांवों में निवास करती है जो लगभग 6 लाख गांवों में अपनी गुजर-बसर कर रही है। सन् 1951 से लेकर वर्तमान समय तक कई कार्यक्रम क्रियान्वित किये जा चुके हैं किन्तु ग्रामीणों की हालत में कोई अच्छा-खासा सुधार दृष्टिगोचर नहीं होता, आज भी भारतीय ग्रामीण खस्ता हाल नजर आते हैं, कारण बिल्कुल स्पष्ट है कि गांव के लोगों का मुख्य धन्धा कृषि है जो कि मानसून का जुआ है, फिर अन्य कार्यों की भांति कृषि कार्य भी वित्त की समस्या से ग्रसित है, ऐसे स्पष्ट है कि समुचित वित्त के अभाव में कृषि क्षेत्र व अन्य क्षेत्रों का विकास कार्य अवरुद्ध हो जाता है। अतः ग्रामीण संसाधनों का पूर्ण विदोहन करने व ग्रामीण वित्त उपलब्ध कराने की दृष्टि से सन् 1972 में बैंकिंग आयोग व 1974 में शिवरामन कमेटी गठित की गई। इन्होंने अपनी रिपोर्ट में क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की स्थापना की सिफारिश की, अतः सिफारिश के आधार पर 2 अक्टूबर, 1975 को मुरादाबाद, गोरखपुर, भिवानी, जयपुर व मालदा आदि जिलों में क्रमशः सिंडीकेट बैंक, स्टेट बैंक ऑफ इंडिया, पंजाब नैशनल बैंक, यूनाइटेड कमर्शियल बैंक व यूनाइटेड बैंक ऑफ इंडिया द्वारा क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की स्थापना की गई।

औचित्य

कई बार प्रश्न उठाया जाता है कि क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की स्थापना का क्या औचित्य है ? जबकि उनके इस कार्य को वाणिज्यिक बैंक निभा सकते हैं। इसके उत्तर में निम्न तर्क दिये जा सकते हैं :–

1. भारत में आज भी कई सारे ऐसे कृषक हैं जो भूमिहीन हैं, इसी प्रकार लघु व सीमान्त कृषकों की संख्या भी बहुत अधिक है, ये सभी ऊंची ब्याज दर पर ऋण प्राप्त करने में असमर्थ हैं ऐसे में क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक विशेष भूमिका निभा सकते हैं।
2. वाणिज्यिक बैंकों की शाखायें ग्रामीण क्षेत्रों में खोलने पर भारी राशि व्यय होती है।
3. वाणिज्यिक बैंकों के कर्मचारी ग्रामीण वित्त समस्या को समझने में असमर्थ होते हैं, इस कारण से भी क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की स्थापना की आवश्यकता हुई।

उद्देश्य

क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की स्थापना के मुख्य उद्देश्य निम्नलिखित हैं :–

1. लघु और सीमान्त कृषकों की वित्तीय आवश्यकताओं को पूरा करना।
2. कृषकों को साहूकारों के चंगुल से मुक्त करना।
3. ग्रामीण वित्त में योगदान देकर ग्रामीण अर्थव्यवस्था के लिए एक सुदृढ़ आधार तैयार करना।
4. पिछड़े व जन-जातीय क्षेत्रों में बैंक शाखायें खोलकर उन क्षेत्रों की समस्याओं को दूर करना।
5. ग्रामीण संसाधनों का पूर्ण विदोहन कर आर्थिक विकास में योगदान।

क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक मुख्यतया अल्पावधि व मध्यकालीन ऋण उपलब्ध कराते हैं जिनका उपयोग बीज, खाद, फसल बोने से काटने तक की अवधि में किये गये व्ययों कृषक व पशुओं की दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु व पशुधन खरीदने तथा कृषि उपकरणों की मरम्मत आदि कार्यों के लिए किया जाता है। ये ऋण मुख्यतया छोटे व सीमान्त किसानों और कृषि श्रमिकों, कारीगरों, छोटे उद्यमकर्ताओं और व्यापार तथा उत्पादन कार्यकलापों में लगे हुए कम साधन वाले व्यक्तियों को प्रदान किये जाते हैं। यह नीति इसलिये बनाई गई ताकि बड़े कृषक अनुचित फायदा न उठा सकें तथा उपेक्षित व कमजोर वर्ग लाभ से वंचित न रह जायें। प्रत्येक क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक अपने निर्धारित कार्यक्षेत्र में कार्य करेगा व आवश्यकतानुसार सम्बन्धित क्षेत्र में शाखायें स्थापित करेगा। समय-समय पर राज्य सरकार द्वारा जो योजनायें शुरू की जाती हैं उनके सफल क्रियान्वयन

में सहयोग देने का कार्य भी यह बैंक करता है। बैंकों द्वारा दिये जाने वाले ऋण की ब्याज दरें किसी भी विशिष्ट राज्य की सहकारी संस्थाओं की प्रचलित दरों से अधिक नहीं होती। इसी प्रकार प्रत्येक बैंक एक समर्थक बैंक के निरीक्षण में कार्य करता है जो कि ग्रामीण बैंकों को विभिन्न प्रकार के कार्यों जैसे शेयर पूंजी क्रय करने, उनकी स्थापना में सहयोग व प्रबन्धकीय तथा वित्तीय कार्यों को सम्पन्न करने में सहायता देता है।

प्रगति

स्थापना के समय से वर्तमान समय तक ग्रामीण वित्त में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हुए क्षेत्रीय बैंकों ने विशेष उल्लेखनीय प्रगति दर्शाई है। स्थापना के समय इनकी संख्या मात्र पांच थी। वर्तमान में इनकी संख्या बढ़कर 200 से भी अधिक हो चुकी है, जिनकी कि 15 हजार से भी अधिक शाखायें विभिन्न भागों में फैली हुई हैं।

पिछले विभिन्न वर्षों में क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की संख्या में जहां एक ओर वृद्धि हुई है वहीं दूसरी ओर अधिकाधिक शाखा विस्तार होने से अधिकाधिक ग्रामीण लोगों को साख सुविधा उपलब्ध हुई है। ग्रामीण क्षेत्रों में दस हजार की जनसंख्या पर एक बैंक शाखा स्थापित की जाती है। ग्रामीण क्षेत्रों में इनके द्वारा किसान, मजदूर, दस्तकार उद्यमी, व्यवसायी व स्वरोजगार प्राप्त व्यक्तियों को सरल किश्तों पर साख प्रदान की जाती है। प्रारम्भ में यह राशि केवल 10 लाख रुपये थी जो वर्ष 1988-89 में बढ़कर 2,23,000 लाख रुपये हो गई। यह तथ्य इस बात को स्पष्ट करता है कि ग्रामीण क्षेत्रों में इस प्रकार के बैंकों की स्थापना का प्रयोजन जहां एक ओर ग्रामीणों की दशा में सुधार करना है वहीं उन्हें आत्म निर्भर बनाना भी है ताकि वे राष्ट्र के आर्थिक विकास में अपना सहयोग दे सकें।

आज क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की स्थापना को लगभग 15-16 वर्ष हो चुके हैं किन्तु देखने में आता है कि इनको आशातीत सफलता नहीं मिल पाई। ग्रामीण क्षेत्रों की बेरोजगारी, गरीबी व भुखमरी आदि समस्याओं को दूर करने के उद्देश्य से इनकी स्थापना की गई थी किन्तु आज भी देश की लगभग 20.50 करोड़ जनता गरीबी की रेखा से नीचे जीवन यापन कर रही है, जिसमें से अधिकांश जनता ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करती है। प्रश्न उठता है कि आखिर ऐसे कौन से कारण हैं जो इन बैंकों को वांछित प्रगति दिलाने में बाधक बने हुए हैं। इसके उत्तर में निम्न बिन्दुओं का सहारा लिया जा सकता है :–

1. क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के सामने एक महत्वपूर्ण समस्या वसूली की समस्या है, किसान व अन्य वर्ग बैंक से जो ऋण प्राप्त करता है उसकी अदायगी समय पर नहीं कर पाते जिससे बैंक की कार्यशील पूंजी में विपरीत असर पड़ता है।

2. एक सर्वे द्वारा ज्ञात हुआ है कि बैंकों ने अपनी सीमा से अधिक ऋण दिया है, जिससे तरलता अनुपात पर विपरीत असर पड़ा है और यह भविष्य में वित्तीय संकट को आमंत्रित करता है।

3. संस्था की सफलता में अनुभवी व प्रशिक्षित कर्मचारियों का विशेष योगदान होता है, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक आज इस समस्या का सबसे अधिक सामना कर रहे हैं कि इनमें योग्य व प्रशिक्षित कर्मचारियों का अभाव है, कारण कि कोई भी व्यक्ति गांवों में जाकर कार्य नहीं करना चाहता।

4. देश में अशिक्षा का स्तर आज भी अत्यधिक है, गांवों में यह स्तर और भी अधिक है। शिक्षा के अभाव में ग्रामीण लोग इनसे लाभ उठाना नहीं जानते और आज भी अपनी छोटी-मोटी वित्तीय आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु महाजन के पास जाते हैं ऐसे में इन बैंकों की स्थापना का औचित्य ही समाप्त हो जाता है।

5. ग्रामीण क्षेत्रों में आज भी आधारभूत सुविधाओं जैसे जल, यातायात, संचार, स्वास्थ्य, सड़क, आदि का नितांत अभाव है। ये सभी बैंक शाखाओं का विस्तार करने में बाधा उत्पन्न करते हैं।

इस प्रकार क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक ग्रामीण साख प्रदान करने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। वैसे भी ग्रामीण भारत में इस प्रकार के बैंकों की विशेष भूमिका हो सकती है जहां गरीब व भोले किसान महाजन व साहूकारों के चंगुल में फंसते चले जाते हैं। अतः आसान शर्तों व कम ब्याज दर पर ऋण उपलब्ध करवा कर क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक एक विशेष भूमिका निभाते हैं। दूसरी ओर कुछ समस्यायें देखने में आ रही हैं जिनकी वजह से इन बैंकों की स्थापना पर ही प्रश्न चिन्ह लगने लगे हैं। अतः कुछ सुझाव दिये जा सकते हैं जो इनकी कार्यकुशलता में आने वाली गिरावट को रोकने में सहायक हो सकते हैं :–

1. लोगों को बैंकों का महत्व समझाया जाये, इसके लिए ग्रामीण क्षेत्रों में शिक्षण सुविधाओं का विस्तार किये जाने की आवश्यकता है।

2. ऋण की वसूली समय-समय पर होती रहे, इसके लिए समुचित कानून बनाये जाने की आवश्यकता है साथ ही मौके पर जाकर यह भी देखा जाना चाहिए कि जिस कार्य के लिए ऋण दिया था क्या वह उसी हेतु प्रयोग में लाया जा रहा है ।

3. ग्रामीण क्षेत्रों में आधारभूत सुविधाओं के विस्तार कार्यक्रम को प्राथमिकता दी जाये ताकि शहर के योग्य व प्रशिक्षित कर्मचारी भी ग्रामीण क्षेत्रों में जाने से न हिचकिचायें ।

5. बैंकों के कार्य को केवल ऋण देने तक ही सीमित न किया जाये, वरन् सलाहकारी संस्था के रूप में भी अपने को विकसित करें ।

द्वारा के. एस. मुरेठिया,
बी-बी- 9 प्रताप नगर,
टोंक फाटक, जयपुर
पिन- 302015

कुरुक्षेत्र पत्रिका की सफलता हेतु नगर महापालिका हार्दिक शुभ कामना करती है

नगर महापालिका, इलाहाबाद

नागरिकों से अपेक्षा है कि :–

1. कूड़ा आदि निर्धारित समय तथा कूड़ेदान में ही फेंके ।
2. अतिक्रमण सामाजिक अपराध है । पटरियों एवं सार्वजनिक मार्गों पर अतिक्रमण न करें ।
3. सभी प्रकार के करों की अदायगी निर्धारित समय पर करें ।
4. छुट्टे पशुओं को सड़क पर न छोड़ें और न ही सार्वजनिक जमीनों पर बांधें ।
5. पार्कों को स्वच्छ, साफ-सुथरा रखें एवं पार्कों में लगे वृक्षों की रक्षा करे ।
6. सड़क पर लगे बिजली के सामानों की रक्षा करें ।

वी.के. द्विवेदी	प्रभुनाथ मिश्रा	श्यामा चरण गुप्त
सहायक नगर अधिकारी	मुख्य नगर अधिकारी	नगर प्रमुख

उड़ीसा के ग्रामीण क्षेत्र में रोगियों का इलाज करते हुए

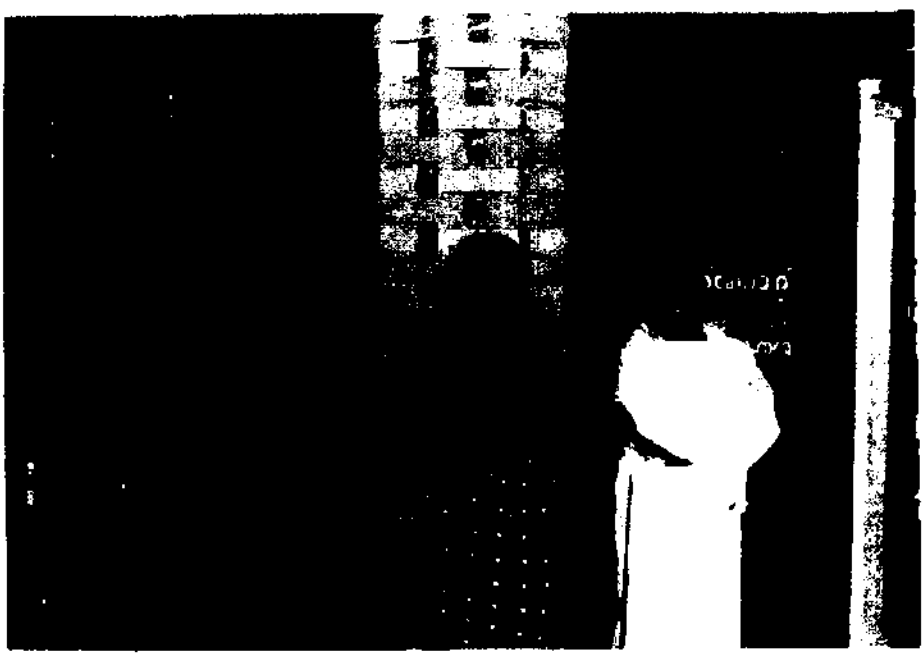

ग्रामीण चिकित्सा केन्द्र

आर.एन./708/57
डाक-तार पंजीकरण संख्या : डी (डी एन) 98
पूर्व भुगतान के बिना एन.डी.पी.एस.ओ., नई दिल्ली में डाक में डालने
की अनुमति (लाइसेंस) : यू (डी एन)-55

RN/708
P & T Regd. No. D (DN)
Licenced under U (DN)
to post without pre-payment at NDPSO, New De

डा. श्याम सिंह शशि, निदेशक, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाऊस, नई दिल्ली-110001 द्वारा प्रकाशित और
वीरेन्द्रा प्रिंटर्स, हरध्यान सिंह रोड, करोल बाग
नई दिल्ली-110005 द्वारा मुद्रित